DELHI UNIVERSITY
LIBRARY

DELHI UNIVERSITY LIBRARY

Cl No. O152:2M901 28 G9

Ac No 29537 Date of release for loan

This book should be returned on or before the date last stamped below. An overdue charge of 0.6 nP. will be charged for each day the book is kept overtime.

धीरे-धीरे

संपादक
सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-विजेता
श्रीदुलारेलाल
(सुधा-संपादक)

हमारा अभिनव नाट्य-साहित्य

राजमुकुट	गोविंदवल्लभ पंत	२	००
अंगूर की बेटी	"	२	५०
अंतःपुर का छिद्र	"	१	५०
वरमाला	"	१	५०
सुहाग बिंदी	"	२	५०
सम्राट अशोक	रूपनारायण पांडेय	३	५०
बाँसुरी		३	००
कर्बला	प्रेमचंद	४	५०
विवाह-विज्ञापन	बदरीनाथ भट्ट	२	००
लबड़धोंधों	"	२	००
पृथ्वीराज की आँखें	डॉ० रामकुमार वर्मा	२	५०
पूर्व भारत	मिश्रबंधु	२	५०
तुलसीदास	जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी	५	००
उत्सर्ग	चतुरसेन शास्त्री	१	५०
भारत-कल्याण	विज्ञान-विशारद	२	००
सुदामा	किशोरीदास वाजपेयी	२	५०
प्रबुद्ध यामुन	वियोगी हरि	३	५०
रायबहादुर	माइकेल मधुसूदनदत्त	३	००

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ

गंगा-पुस्तकमाला का १८०वाँ पुष्प

धीरे-धीरे

[राजनीतिक, मौलिक नाटक]

लेखक

वृंदावनलाल वर्मा

गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ

सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन

चतुर्थावृत्ति सन् १९६२ ई०

मूल्य दो रुपया

प्रकाशक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

लखनऊ

★

SY-90

मुद्रक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

अध्यक्ष गंगा-फाइनआर्ट-प्रेस

लखनऊ

अपने पूज्य देवता

के

चरण-कमलो

म

वक्तव्य

[द्वितीयावृत्ति पर]

बाबू वृंदावनलालजी की प्रतिभा बहुमुखी है। वह श्रेष्ठ उपन्यासकार और कहानी-लेखक तो हैं ही, नाटककार भी हैं।

उनका यह नाटक पढ़कर पाठक प्रसन्न होंगे, यह हमें विश्वास है।

कवि-कुटीर
लखनऊ
१०।८।५१

दुलारेलाल

पुरुष पात्र

राव गुलाबसिंह	एक जागीरदार-जमींदार
चंदनलाल	राव गुलाबसिंह का कारिंदा
मगनचंद	राष्ट्र-संघ का एक देहाती नेता
बुद्धा	गुलाबसिंह का दरबान
धनीराम	बड़ागाँव का एक साहूकार
गोपालजी	कानून-सभा के एक अधिकारी
कन्हैयाजी	
मुबारकअली	,,
दयाराम	कानून सभा का एक सदस्य

कानून-सभा का अन्य एक सेक्रेटरी, कानून-सभा के कुछ सदस्य,
थानेदार, सिपाही, कुछ ग्रामीण इत्यादि

स्त्री पात्र

हीरा	राव गुलाबसिंह की नौकरानी

पहला अंक

स्थान . बड़ागाँव (एक छोटा-सा नगर)

समय : दोपहर बाद—चार बजे

[राव गुलाबसिंह की हवेली की बैठक। बैठक एक बड़ा और ऊँचा कमरा। दीवारे रगीन। कही-कही रग फीका और चटका, टूटा हुआ। छत मे कई जगह बड़े-बड़े धब्बे। बीच मे एक लबी-चौड़ी दराज़दार मेज़। मेज़ पर हरी बानात, जिस पर स्याही के निशान। कुर्सियाँ और सोफ़े यथास्थान। एक कुर्सी लोहे की, बाकी सब बेत की। एक कोने मे एक छोटा-सा तख़्त। उस पर लाल रग का गद्दा। गद्दे पर बिलकुल सफेद, ओछी चादर। मेज़ पर लिखने की सामग्री रक्खी हुई है, और पास मे हिसाब की बहियाँ तथा कुछ पीले काग़ज़। दीवार पर कृष्ण-लीला और जगली जानवरो के बेतरतीब, बड़े-छोटे चित्र ऊँचे टँगे हुए है। नीचे फ़र्श पर टाट बिछा हुआ है। टाट पर ओछी दरी। दरी का फ़र्श कई जगह फटा हुआ, और उस पर, दो-तीन स्थानों पर, तेल के बड़े-बड़े दाग़। ४० वर्ष से अधिक अवस्था के जागीरदार राव गुलाबसिंह पाजामा-कुरता पहने, गले में तौलिया डाले, कुरते की बाँह में रूमाल रक्खे बैठे हैं। पैर में चमकदार जूता,

उस पर कहीं-कहीं चूने के धब्बे। तोंद ज़रा निकला हुआ। राव गुलाबसिंह विश्वविद्यालय के पढ़े, स्वभाव के आतुर, मनोरथ के निर्बल और पुरानी परिपाटी को नया रंग देने के अभ्यासवाले, परंतु चालाक और विद्यादंभी।]

राव गुलाबसिंह—(उठकर और मेज़ के किनारे पर एक हाथ फिसलाते, टहलते-टहलते) सबको बराबर के हक, समान अवसर और एक-सा बर्ताव मिलना चाहिए। बात तो किसी कॉलेज की पुस्तक से उठाई हुई-सी जान पड़ती है। परंतु (लिखने की सामग्री के पास जाकर) कोई है ? कोई है ? कोई है ?

(दरबान का प्रवेश।)

दरबान—सरकार !

गुलाबसिंह—कहाँ सोता रहता है, गधा कहीं का ?

दरबान—सरकार !

गुलाबसिंह—ड्योढ़ी पर नहीं था ? चरस पीता था क्या ?

दरबान—चरस काहे से पिऊँगा सरकार ! ओं...ओं

गुलाबसिंह—चंदनलाल को बुला ला।

(दरबान का प्रस्थान।)

गुलाबसिंह—रसीदों और हुक्मनामों को मुहर लगाकर ही जारी करना चाहिए। मुहर की तैयारी में इतनी देर !

(चंदनलाल का प्रवेश। अधेड़ अवस्था का मनुष्य। सफेद, दुपल्ली टोपी लगाए, अचकन और पाजामा पहने। गले में रंगीन रूमाल बाँधे पुराने ढंग का काइयाँ मनुष्य।)

चंदनलाल—मुहर बन गई। दाम बिलकुल नहीं लगे।

गुलाबसिंह—सो कैसे? क्या किसी को मार-पीटकर बनवाई है?

चंदनलाल—नहीं सरकार! परमा अपना जोता है। उसका लड़का इस काम को सीख आया है। उसने कहते ही बना दी। अच्छी बनी है। खूब है।

गुलाबसिंह—(मुहर और स्याही के ठप्पे को चंदनलाल से लेकर और मेज पर रक्खे हुए एक काग़ज़ पर उछालकर) "बड़ागाँव एस्टेट—माल-विभाग।" अच्छी बनी है। सब जरूरी काग़ज़ों पर इसे छापो।

चंदनलाल—सरकार, शब्द एस्टेट बन गया है। परंतु जागीर और स्टेट मे कोई बड़ा अंतर नहीं। और, एस्टेट तो उससे बिलकुल मिलती-जुलती हुई ध्वनि है।

गुलाबसिंह—(मुहर हाथ मे नचाते हुए, सोफे पर बैठकर) जमींदारी नष्ट करने का प्रयास है, केवल रियासतें और जागीरें बचेंगी। ऊँच-नीच का भेद बिदा ले रहा है। हिंदुस्थान को पूरी आजादी मिलने मे अब कितनी देर है भाई?

चंदनलाल—सरकार, ऊँचे-नीचे पहाड़, छोटी-बड़ी नदियाँ, लंबे-नाटे मनुष्य तो भगवान् ने ही बनाए हे। परंतु आप विद्वान् हैं, अँगरेजी में जो कुछ लिखा हो, मैं क्या कह सकता हूँ।

गुलाबसिंह—मैंने इस विषय पर बहुत-सी पुस्तकें पढ़ी है। चीजों का यह अंतर केवल देखने-भर का है। भीतर वे सब

बराबर हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि विशाल अँगरेजी साम्राज्य का मुक़ाबला साम्यवादी ही कर सकते हैं।

चंदनलाल—उस दिन कलेक्टर साहब भी कह रहे थे कि साम्यवाद कोई बुरी बात नही। उनके देश में भी यह मत बड़े ज़ोरो पर है।

गुलाबसिंह—वही मैं भी कहता हूं। परंतु हमारे देश को उससे, वर्तमान अवस्था में, नुकसान होगा। ज़मीदारों को अपना संगठन करना और किसानों को अपना लेना चाहिए। ज़मींदार किसानों के स्वाभाविक नेता हैं। जो लोग किसानों का बरग़लाने और कहते हैं कि लगान मत दो, वे देश के शत्रु हैं।

चदनलाल—आज जो थोड़ा-सा लगान वसूल किया है, उसकी रसीदों पर मुहर नही लगाई। तैयार तो हो गई थी, परंतु सोचा, आपकी आज्ञा लेकर फिर जारी करूंगा।

गुलाबसिंह—कल से आरभ कर दो। अवश्य।

चदनलाल—कल से तो बहुत दिनों तक लगान-वसूली की कोई संभावना ही नही दिखाई देती।

गुलाबसिंह—क्यो? क्यों? मैं किसानों का हितचिंतक हूँ। किसी की खाल नही उधेड़ता। किसी को मुर्ग़ा नही बनवाता। परंतु यदि वे बदमाशी करेंगे, तो पीस दूंगा।

चदनलाल—सरकार, इन बेचारों का इतना दोष नहीं। बेचारे अब भी हाथ जोड़कर राम-राम करते हैं—रियासत के दरबान तक को। परंतु राष्ट्र-सघ के गावदी नेता बकते फिरते

हैं कि आवक-जावक मत दो, रखौनी मत दो, गंजियार, सगाई, फलदान, ब्याह, गोद, डाँड़ मत दो। अपने यहाँ कुँवर और बेटी के विवाह के शुभ अवसर पर नज़राना लिया जाता रहा है; दावतों के लिये ड्योढ़ी तौल पर घी खरीदा जाता रहा। अस्पताल, सड़क, तालाब, नहर, पुलिस के खेल, जलसे और तमाशे के लिये चंदे लोग हँस-हँसकर देते आए हैं। होली-दिवाली को राम-राम पर भेंट चढ़ाते आए है। इन सबको बंद करने के लिये कहते हैं।

गुलाबसिंह—इनमें से बहुत-सी बातें तो अनुचित नहीं। किसानों ने ज़मींदारों के लिये सदा अपने सिर कटवाए और देश की लाज रक्खी।

चंदनलाल—अब वे लोग बात का बतंगड़ बनाकर इस पुराने प्रेम को नष्ट करना चाहते हैं।

गुलाबसिंह—हमारे गाँव के दस्तूर ही में ये सब हक़ दर्ज हैं। ब्रिटिश सरकार ने माने हैं। प्रजा हमें जो कर देती है, उसके बदले में हमारी स्टेट उसे ढोर चराने और लकड़ी काटने के हक़ दिए हुए है।

चंदनलाल—परंतु ये नेता अपनी भोली-भाली प्रजा को अब यह पाठ पढ़ा रहे हैं कि पानी तुम्हारा, लकड़ी-घास तुम्हारी, पेड़ तुम्हारे, जमीन तुम्हारी और आसमान तुम्हारा। प्रजा भड़क उठी है सरकार! कहती है, अब हम कुछ न देंगे, ज़मीन का लगान भी न देंगे।

गुलाबसिंह—देखोजी, आज जो रसीदें किसानों को दी हैं, वापस ले लो। मुहर लगाकर फिर उन्हें जारी करो। किसानों को यह बात पक्की तौर पर मालूम हो जानी चाहिए कि यह रियासत है, दिल्लगी नही। और, राजा-प्रजा का संबंध क़ायम रखने में ही सबकी भलाई है।

चंदनलाल—बहुत अच्छा सरकार !

(नेपथ्य मे 'वंदे मातरम्' की ध्वनि।)

गुलाबसिंह—क्या यह वही दल है ?

चंदनलाल—जी, आज सुराजी एक पुस्तकालय जारी कर रहे हैं। एक-आध दिन में क़िसान-सभा भी करनेवाले हैं। उसी की यह पेशगी है।

गुलाबसिंह—देखो दीवान साहब, मैं भी सुराजी हूँ। मैं भी हिंदुस्थान को बहुत शीघ्र स्वतंत्र देखना चाहता हूँ। परंतु अपने गांव में इस हो-हल्ले का बढ़ना मुझे नही भाता। पुस्तकालय किसने खुलवाया ?

चंदनलाल—उन्ही लोगों ने। पुस्तकालय एक कोठरी में है। दो समाचार-पत्र रक्खे हैं, और दस-बारह पुस्तकें। किसी बड़े सुराजी नेता ने मुफ्त में कुछ पुस्तकें दी हैं। प्रजा ने कुछ चंदा किया है।

(नेपथ्य में फिर 'वंदे मातरम्'।)

(दरबान का प्रवेश।)

दरबान—सरकार, एक नेता आपसे मिलना चाहते हैं।

गुलाबसिंह—टिकट दिया ?

दरबान—नही सरकार !

गुलाबसिंह—तुमने यहाँ का कायदा बतलाया ?

दरबारन—हाँ सरकार, बताया।

गुलाबसिंह—दीवान साहब, एक काग़ज़ पर मुहर लगाकर लिख भेजो कि मिल सकते है।

(चदनलाल ने एक पीले कागज़ पर मुहर लगाई, और कुछ लिखकर कागज़ दरबान को दिया। दरबान लेकर गया।)

गुलाबसिंह—बुलाओ। यह ज़रा ठीक नही हुआ। इस अवसर पर मुहर नही लगानी चाहिए थी।

(चदनलाल दौडकर जाता है।)

(सगुनचद का प्रवेश। सिर के बाल जरा लबे। मूछे मुड़ी हुई। सफ़ेद खादी का कुरता कलाइयो पर ऊपर की ओर लौटा हुआ। बद गलेदार चौखाने की फतुही कुरते के ऊपर पहने, सफेद किश्तीनुमा टोपी लगाए, सफेद धोती पहने, हाथ मे सफेद झोला, जिस पर मोटे अक्षरो मे 'वदे मातरम्' लिखा हुआ। पीछे-पीछे चदनलाल।)

चंदनलाल—सरकार, आपको देर तक ड्योढ़ी पर खड़ा नहीं रहना पड़ा। आप बडे नेता है। बहुत अच्छा बोलते हैं।

गुलाबसिंह—(स्वागत के लिये खड़े होकर) वाह, क्या बात है ! रोज ही आपकी बाते अखबारों में पढता हूं। आपने देश के लिये जो त्याग किए हैं, वे किसी से छिपे नही।

सगुनचंद—वंदे मातरम् ।

गुलाबसिंह—वंदे मातरम् । विराजिए ।

(सब बैठते हैं । चंदनलाल लोहे की कुर्सी पर बैठता है ।)

सगुनचंद—एक कष्ट देने आया हूँ ।

गुलाबसिंह—आदेश कीजिए ।

सगुनचंद—राष्ट्र-संघ के मेंबर बन जाइए ।

गुलाबसिंह—बात तो कुछ नहीं । मैं तो राष्ट्रीय विचारों का आदमी हूँ । स्वतंत्रता के लिये मेरे हृदय में तड़प है । जब उस दिन कमिश्नर ने मुझसे चंदा देने के लिये कहा, तब मैंने साफ़ कह दिया कि मेरे बस का नहीं । दरबार में खादी के कपड़े पहनकर गया, और विलायती सिगरेट नहीं पी । आप सिगरेट पीते है ? पान मँगवाओ चंदनलाल ।

(चंदनलाल गया ।)

सगुनचंद—मैं फ़ार्म लाया हूँ ।

गुलाबसिंह—मैं बिना फ़ार्मवाले मेंबरों में से हूँ । क्षत्रिय-सभा का काम करते-करते पिसा जाता हूँ । दूसरी सभा-सोसाइटियों की बात सोचने तक की फ़ुरसत नहीं मिलती । तो भी, समय-समय पर, जो कुछ बना, सबके लिये चंदा दिया है । राष्ट्र-संघ की नीति से मेरा कुछ मतभेद है । आप लोग ज़मींदारी मिटाकर दान-प्रथा और ललित कलाओं के आश्रय को तंग कर देना चाहते है ।

सगुनचंद—अब आपको बहुत-सी बातें भूलनी पड़ेंगी ।

क्षत्रिय-सभा का टकोसला छोड़ना पड़ेगा । आप लोग बेगार न ले सकेंगे । लगान कम होगा । जगल में चराने, लकड़ी काटने और विरासत तथा जोत को बै-रेहन करने के हक़ किसानों को देने पड़ेंगे । सादगी और श्रम के साथ जीवन बिताना होगा ।

गुलाबसिंह--लगान कम होने पर मालगुज़ारी भी घटनी चाहिए ।

सगुनचंद—मालगुज़ारी बढ़ेगी, लगान घटेगा ।

गुलाबसिंह—तब शासन का क्या होगा ? हम लोग मालगुज़ारी तो दे न पावेंगे ।

सगुनचंद—शासन-विधान तो हमें तोड़ना है, उससे हमें लड़ना है । उसे हमें ठीक करके चलाना है ।

गुलाबसिंह—ईश्वर करे, हमारा देश कल ही पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करे ।

सगुनचंद—(गुलाबसिंह के व्यंग्य की परवा न करके) आपके गाँव में हम लोगों ने अभी-अभी एक छोटा-सा पुस्तकालय क़ायम किया है । आपकी लगातार सहायता बिना वह कैसे चलेगा ?

(गुलाबसिंह सोचता है ।)

गुलाबसिंह—मैं सोच रहा था कि हिंदुस्थान की पूरी स्वतंत्रता में तीन बड़ी-बड़ी बाधाएँ है, बल्कि चार । पाँच भी हो सकती हैं । पहली तो मुसलमानों की स्वर्थ-पूर्ण वृत्ति, दूसरी

रियासतें, तीसरी हमारी आपस की फूट, चौथी जापान और जर्मनी की नीयत, पाँचवीं अंगरेज़ो की कुटिल नीति । छठी और है—अर्थात् हिंदुओं की कमज़ोरी ।

सगुनचंद—राष्ट्र-संघ इन सब बाधाओ की एकमात्र राम-बाण ओषधि है ।

गुलाबसिंह—मैंने 'हिंदू-नामक पत्र मे एक लेख पढ़ा है, जिसमें इस बात की प्रबल दलील है कि राष्ट्र-संघ हिंदुओ को और भी कमज़ोर बना रहा है । वह मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिये हिंदुओं का बलिदान करने को तैयार रहता है ।

सगुनचंद—और, कुछ मुसलमान यह कहते हैं कि राष्ट्र-संघ हिंदू-सभा का दूसरा संस्करण है । जो लोग ये बाते कहते हैं, वे नौकरशाही के ग़ुलाम हैं, कमीने और नीच है । वे अंग-रेज़ साम्राज्यवाद के स्पष्ट या गुप्त सहायक और समर्थक है—नरमदलिए ख़ुशामदी और आराम-कुर्सी में करवटें लेनेवाले मुटल्ले ।

गुलाबसिंह—यह बात ज़रा कम ठीक मालूम होती है । बिलकुल ठीक बात यह है कि ज़मीदारों और किसानों का सदा से घनिष्ठ संबंध रहा है । हम देहातियों की समस्याओं को नगरों में रहनेवाले न समझते हैं, न सुलझा सकते हैं । हिंदुस्थान को आज़ादी हमीं लोग दिलवा सकते है, परंतु सब काम होता है धीरे-धीरे ही । सरपट दौड़ने से ठोकर लगती और माथा फूटता है ।

सगुनचंद—किसानों और मजदूरों को इकट्ठा करके आप अपनी बात कहें, और हम अपनी कहते हैं; फिर देखिए, वे किसकी सुनते हैं।

गुलाबसिंह—नेतागिरी के नीलाम में उग्रता की जो सबसे ऊँची बोली बोलता है, वही खूब सफल होता है—क्षमा कीजिएगा। परंतु यह भी सच है कि उग्र होने के साथ ही आप लोग बहुत निडर भी हैं, और आदर्श की लगन के सच्चे तथा व्यग्र भी।

सगुनचंद—इस निखार में तो उदार-दल की छलनी का प्रयोग-सा नजर आता है। क्या आप उदारदलिए हैं ?

गुलाबसिंह—बिलकुल नहीं। मुझे उनसे घिन है।

(चाँदी की थाली में पान लिए हुए चंदनलाल आता है।)

गुलाबसिंह—पहले खाने के लिये कुछ लाओ, तुरंत। पान पीछे।

(मेज पर पान की थाली रखकर चंदनलाल जाता है।)

सगुनचंद—मुझे भूख नहीं। अभी, थोड़ी ही देर पहले, भुने चने और गुड़ खाया है। थोड़े-से चने झोले में अब भी पड़े हैं।

गुलाबसिंह—असंभव। यदि आप जल-पान न करेंगे, तो मैं समझूँगा, आप मुझे अपना नहीं समझते।

सगुनचंद—वैसे आपका धन अग्राह्य है, परंतु आप राष्ट्रीय आंदोलन की सदा सहायता करते रहे हैं। इन दिनों अनेक कामों के लिये रुपए की बहुत जरूरत है, यदि आप एक अच्छी रक़म चंदे में न देंगे, तो मैं तीन दिन तक अनशन करूँगा,

और यही धरना दूंगा, फिर चाहे तीन वर्ष की क़ैद क्यों न भुगतनी पड़े। (जेब से पॉकेट-बुक निकालकर)मैं आपको रसीद दूंगा।

गुलाबसिंह—आजकल चदो के मारे नाकोंदम है। सबेरे-शाम चंदे का रजिस्टर लिए कोई-न-कोई खड़ा रहता है। इलाहाबाद जाता हूँ, तो ज़मीदार-सभा, लखनऊ जाता हूँ, तो कला-भवन, आगरा जाता हूँ, तो आयुर्वेद-मडल, सनातन धर्म-सभा, आर्य-समाज—कहाँ तक गिनाऊँ। न घर में चैन है, न बाहर।

सगुनचद—कूड़ा-घर में सोना फेकने से कोई लाभ नही। राष्ट्र-संघ को दीजिए, जिससे सबका हित हो।

(चदनलाल का प्रवेश। उसके पीछे पकवान का थाल लिए हीरा।)

चंदनलाल—सरकार, न-मालूम रानी साहब को कैसे, कहाँ से और कब श्रीमान् सगुनचदजी के पधारने का समाचार मिल गया था। जब मैंने भोजन के लिये सवाद भिजवाया, थाल सजवा रही थी।

गुलाबसिंह—रानी साहब राष्ट्र-सघ की पक्की भक्त हैं। वह तो झंडा उठाने के जलूस में सबसे आगे स्थान लेनेवाली थीं। (सगुनचंद से) थोड़ा-साजल-पान करके मुझे कृतार्थ करिए।

(सगुनचद ज़रा-सा मुस्किराता, तस्वीरो की ओर देखता हुआ कुछ सोचता है।)

गुलाबसिंह—भोजन ठंडा हो रहा है। हीरा, हाथ धोने के लिये पानी और तौलिया ले आ।

(हीरा का प्रस्थान ।)

सगुनचद—आप लोगो की ज़मीदारी-सभा कुहरे के बादल के समान है। उदय के समय घनी। राष्ट्र-सघ के सूर्य के ऊँचे उठते ही बिलकुल तितर-बितर हो जायगी। कुछ ही दिनों बाद आपके नवाब और राजा धूल चाटते हुए नज़र आवेगे। कठोर तथ्य है, क्षमा कीजिएगा।

चदनलाल—महाराज, यदि ज़मीदार-सभा के पास काफ़ी रुपया इकट्ठा हो जाय, यदि अच्छे बोलनेवाले विद्वान् मिल जायँ, यदि बड़े-बड़े अख़बार निकाले जायँ, यदि सेवा-समितियाँ बनाई जायँ, यदि शिल्प-उद्योग बढ़ाने की व्यवस्था की जाय, यदि बेकारी बद करने का उपाय किया जाय, यदि सफ़ाई, स्वच्छता, शिक्षा, सपत्ति—

गुलाबसिह—सूचीपत्र है, या शैतान की आँत? वास्तव में ज़मीदारों को सगठन और किसानो के साथ अच्छा बर्ताव करने की आवश्यकता है। फिर तो ये सब बाते स्वत: धीरे-धीरे हो जायँगी।

(पानी और तौलिया लिए हीरा का प्रवेश ।)

सगुनचंद—राव साहब, जब तक आप चंदे का वचन नहीं देते, मैं अन्न-जल कुछ भी ग्रहण न करूंगा।

(नेपथ्य मे वदे मातरम् ।)

गुलाबसिह—मैं वचन देता हूँ । दूँगा । देता आया हूँ । बचूँगा भी कैसे ? और कोई होता, तो, सच मानिए, उसे सीधा खिसकाता । परतु आपके लिये मेरे हृदय मे इतनी श्रद्धा है कि न मन नाही कर सकता है, न जीभ ।

(सगुनचद ने हाथ धोकर भोजन करना आरभ किया ।)

(हीरा का प्रस्थान ।)

सगुनचंद—यदि हमारे यहाँ के जमीदार शीघ्र ही राष्ट्र-सघ के साथ न हुए, तो उनकी वही गति होगी, जो रूस के जमीदारों की हुई थी ।

गुलाबसिह—हिसा या अहिसा द्वारा ?

चदनलाल—चदा देने पर भी ?

गुलाबसिह—ठहरो, चदे से इस प्रश्न का कोई सबध नही ।

सगुनचद—(जल्दी-जल्दी खाते-खाते) आपका कर्तव्य है । राष्ट्रीय आदोलन को रिश्वत देकर भ्रष्ट नही किया जा सकता । आप त्याग करेंगे, तो देशोपकार का पुण्य पाएँगे । वैसे तो इस तरह के भी अनेक हैं, जो त्याग के नाम से चिढ़ते और दिन-रात पाप बटोरते रहते है । (जरा-सा ठहरकर, परतु खाते-खाते) आप सीप के बटन क्यों लगाते है ? खादी क्यों नही पहनते ?

गुलाबसिह—पहनता हूँ । मेरे पास कई अचकन और पाजामे खादी के हैं । चुनाव के दिनों में पहनता था । और

अनेक अवसरों पर भी पहन लेता हूं। होग, ओ हीरा, पकवान, हलुआ, मिठाई, चटनी और लाओ।

सगुनचंद—अब न खाऊँगा।

गुलाबसिंह—असंभव, यदि आप न खाएँगे, तो चंदा न दूंगा।

सगुनचंद—तब अवश्य खाऊँगा। बातो-बातों में बहुत खा गया, मालूम ही नही पड़ा।

(भोजन-सामग्री लिए हुए हीरा का प्रवेश।)

सगुनचंद—(नाही का संकेत करने पर भी सब-की-सब ले लेना है।) राजा साहब, आपको पेटेंट चमड़ेवाले जूते न पहनने चाहिए, और न दीवानजी को रंगीन रूमाल गले मे डालना चाहिए। राजा साहब, चट्टी का प्रयोग किया करिए।

गुलाबसिंह—('राजा साहब, के संबोधन से प्रसन्न होकर) कही ज़रीदार चट्टी मिलती है ?

हीरा—हां सरकार ! रानी साहब के लिये तो मंगाई गई थी न ?

गुलाबसिंह—(ज़रा झेंपकर) हां, वह है। परंतु टूटती बहुत जल्दी है। हम लोग किसान आदमी हैं। उस तरह की चट्टी हमारे पास नहीं टिक सकती। तुम जाओ हीरा, जब ज़रूरत होगी, बुला लेंगे।

(हीरा का प्रस्थान।)

गुलाबसिंह—यह भी राष्ट्र-संघ में है, मानिए। बंदूक

चलाना जानती है, लाठी भाँजती है। समाचार-पत्र पढ़ती है। और, रानी साहब का तो कहना ही क्या; उन्होंने तो कई बाघ मारे है।

सगुनचंद—देश की स्वतत्रता के लिये हमें अपनी बहनों को तैयार ही करना पड़ेगा।

गुलाबसिह—आपको संगीत से प्रेम है ?

सगुनचद—जब तक ललित कलाएँ सार्त्रजनिक न हों, और इतनी सरल न कर दी जायँ कि साधारण-से-साधारण और दरिद्र-से-दरिद्र व्यक्ति उनसे अपना मनोरजन कर सकें, तब तक थोड़े-से राजा और नवाब उनमें चमत्कार नहीं पैदा कर सकते। ✓

चदनलाल—लोटे पर बाँस की कमची पीट-पीटकर गँवार लोग जो गाना ढोलकी के साथ गाते हैं, और गोबर से लिपी हुई मिट्टी की दीवारों पर चूने की जो उल्टी-सीधी लकीरों से मनुष्यों के जानवर और जानवरों के मनुष्य बना डालते हैं, क्या आप उसे ललित कला कहेंगे ?

सगुनचद—आपके सैकड़ों तानसेन उन गँवार-गीतों को उस खूबी और भाव के साथ नही गा सकते और न आपके लाखों रवि वर्मा उस रुचि के साथ वैसे चित्र खींच सकते हैं।

(गर्व के साथ इधर-उधर देखता है।)

गुलाबसिह—हीरा, हीरा, पानी लाओ। (सगुनचंद से) कुछ थोड़ा-सा तो और खाइए।

सगुनचंद—बस ।

(हीरा आती है, और हाथ धुलाकर
थाल इत्यादि उठा ले जाती है ।)

सगुनचंद—मैं तंबाकू नहीं खाता । केवल पान ले लूंगा । अब जाता हूं । बहुत काम पडा है । कल आऊँगा चंदा लेने राजा साहब !

गुलाबसिंह—आपको तो देश की चिंता से ज़रा भी फ़ुरसत नहीं । थोड़ा-सा भी समय आपके पास होता, तो गाना सुनवाता स्त्री और पुरुष दोनो का ।

सगुनचंद—धन्यवाद ! वंदे मातरम् ।

गुलाबसिंह—जय रामजी की ! आपको थोड़ी दूर पहुँचा दूं ।

(सबका प्रस्थान । दूसरी ओर से हीरा का प्रवेश ।)

हीरा—बुद्धा, बुद्धा ।

(बुद्धा दरबान का प्रवेश ।)

बुद्धा—अब तुम्हारा हुकुम ?

हीरा—कोई हुकुम नहीं । आप स्वतंत्र है । घर जायँ, परंतु इस बैठके में ज़रा झाड़ू देकर ।

बुद्धा—मैं सिपाही हूँ । झाड़ू वाला नही ।

हीरा—एक ही बात है ।

बुद्धा—एक ही बात है !

हीरा—हाँ, झाड़ूवाला और सिपाही एक ही बात है ।

बुद्धा—क्या वह नेता ऐसा कहता था ?

हीरा—कुछ इसी तरह की बात कहता था। राजा साहब को आँखें तरेरता था। भूखे और भरे पेट को एकसा समझता था। बुद्धा, उसने इतना खाया कि मैं तो अचरज में पड़ गई।

बुद्धा—तुम्हारा क्या खाया ? तुम्हारी तनखा में से कुछ गया ?

हीरा—तुमको लड़ने के लिये नही बुलाया। सुनो, कुछ गोलमाल होनेवाला है। रानी साहब कहती है कि वह जो नेताजी यहाँ से अभी-अभी डकारें लेते हुए गए है, वह असल में इस गढ़ी में आग लगवाने को आए है। रियाया का मन वैसे ही फिरा हुआ-सा है। पिसनहारी बेगार नही करती, पानी भरनेवाला विना दो रुपया महीना लिए कुएँ में घड़ा नहीं डालता। महीदार लाट साहब की-सी तनखा लिए विना हल नहीं छूता।

बुद्धा—जब गढी को आग लगाने के लिये कोई आवेगा, मैं जागता रहूँगा। बस।

हीरा—सो तो मैं भी जागती रहूँगी, परतु ऐसे मौक़े पर अपने पेट के लिए भी राजा साहब से कुछ और माँगना चाहिए। दिन-रात काम करते-करते पिसी जाती हूँ ; तुम पहरा देते-देते घिसे जाते हो, पर विना माँगे छदाम से सवा छदाम भी कोई देगा ?

बुद्धा—तू तो हीरा, बकवास में नेताजी की भी नानी

निकलेगी। महीना बढ़ाने के लिये कहने से पीठ पर कोड़े पड़ेंगे।

हीरा—कोड़े खाओगे तुम, जिनकी गाँठ में बुद्धि नहीं। मेरी तो कोई उँगली भी नहीं छू सकता। (आहट पाकर) दरबान, यह क़ालीन ज़रा सिकुड़ गया है, इसे ठीक कर दो। मैं बुहारी से साफ करती हूँ। कुर्सियाँ ठिकाने से लगा दो। बड़े आलसी हो। राजा साहब आ रहे हैं।

बुद्धा—आने दो। तुम्हारे मुँह से तो कोई बड़ा है नहीं।

(गुलाबसिंह का प्रवेश। गले मे तौलिया नहीं। पीछे-पीछे चंदनलाल।)

गुलाबसिंह—क्या गुल-गपाड़ा कर रहे हो मूर्खो!

बुद्धा—सरकार, क़ालीन और कुर्शियाँ बिगड़ गई थीं।

गुलाबसिंह—क्या किसी ने कै की थी?

बुद्धा—सरकार—सरकार—यह हीरा।

गुलाबसिंह—ओहो! हीरा, आज रात को या किसी समय एक गाँव की सभा होगी। तुम उसमें जाना। जाओ। हटो।

(बुद्धा और हीरा का प्रस्थान।)

गुलाबसिंह—मेरी तौलिया तक ले गया! उसे भी न छोड़ा।

चंदनलाल—आपने स्वयं दे दी महाराज! उसने तो माँगी न थी।

गुलाबसिंह—मैंने सोचा, लेगा नहीं। ऋतु से बरकत करने की बात कहकर तौलिया सामने करते ही उसने झड़प ली।

(मुहर हाथ मे लेकर बैठता है ।) उसमें लाज या हया तो बिलकुल ही नही । और प्रत्येक विषय पर पक्की राय रखता है, हर मजमून में दखल । यद्यपि जानता कुछ भी नहीं ।

चदनलाल—इस गुण में वह अकेला नहीं है महाराज !

गुलाबसिह--परंतु हैं धुन के पक्के । उनमें संगठन है, और साहसी हैं । इनको क़ाबू में ले आवें, तो काम बने ।

चंदनलाल—चदा देने से तो इनकी दाढ लपकती है । खिलाने-पिलाने का शायद प्रभाव पड़े ।

गुलाबसिह—चंदा तो देते आए है, अब बद नही कर सकते । बद कर देने से चिढ जायँगे । खिलाने-पिलाने की युक्ति में मेरा विश्वास है, परंतु बहस करके भी समझाना चाहिए । और, सबसे अधिक उपयोगी तो अपने वर्ग को प्रबल बनाना है ।

चदनलाल—नही तो बलवे और मार-काट का ज़माना आता है; परतु ज़मीदारो के कानों पर तो जूँ तक नही रेंगती । आपने कितना जगाया, कोई नही सुनता ।

गुलाबसिह—धीरे-धीरे जायँगे । हाथी और भैसे एक क्षण में सावधान नहीं होते, और जब होते हैं, नो आस-पास सबको रौंद डालते हैं । (हँसता है ।)

चंदनलाल—महाराज, सगठन होना चाहिए । विना संगठन के शासन हाथ में नहीं आता ।

गुलाबसिह—शासन धीरे-धीरे हाथ में आवेगा । न भी आवे,

किंतु शासन पर प्रभाव बना रहे, तो भी लाभदायक है। साहूकारों के ऋणों का भार हल्का हो जाय, सरकारी जंगल, नहर और रेल के अहातों की घास मुफ्त में मिलने लगे, कपड़ा सस्ता हो जाय और अनाज महँगा, सब लोगों को शिक्षा, सफ़ाई इत्यादि के समान अवसर मिल जायँ, तो देश को सिवा संपूर्ण स्वतत्रता के और किस चीज़ की कमी रह जाय ?

चदनलाल—महाराज, साहूकारो का कर्ज़ बिलकुल साफ़ नही किया जा सकता ?

गुलाबसिंह—अभी जरा कठिन है। मैंने तुमको कई बार बतलाया है कि मुसलमान-क़ानून में ब्याज वर्जित है, और हिंदू-कानून में धर्म के केवल दूने तक हो सकते हैं। इस मामले में मुसलमान-कानून ज्यादा अच्छा है। ब्याज-ही-ब्याज की रक़म से अनेक लोग लखपती और करोड़पती बन गए हैं। बरसों पहले का हिसाब लगाओ, तो इन लोगों की असल पूँजी सौ रुपए से अधिक न निकलेगी। वे लोग इससे अधिक के अधिकारी नही। परतु व्यापार बद हो जाने के भय से इन लोगों को कानून थोड़ा-सा ब्याज दिलवा दे, तो थोड़ी ही हानि होगी।

चंदनलाल—जात-बिरादरी की जितनी सभाएं होती हैं, उनमें सुधारों के प्रस्ताव पास करते-करते फिर से चारो युग बीत जायँ, तो भी कुछ होता नहीं दिखता। परंतु यदि ये सब

यह प्रस्ताव पास कर दें कि ग़रीबों को फ़ायदा पहुँचाएंगे, और क़र्ज़ की वर्तमान प्रथा मिटा देंगे, तो उपकार-ही-उपकार हो जाय।

गुलाबसिंह—यदि राष्ट्र-संघवाले कानून पास कर दे, तो अच्छा होगा। ज़मींदारों और किसानों को बड़ा लाभ होगा, और राष्ट्र-संघ अप्रिय हो जायगा। इसके पोषक साहूकार ही हैं।

चंदनलाल—करोड़ीमल ने नोटिस दिया है—मैं आज आपसे कहते-कहते रुक गया।

गुलाबसिंह—करोड़ीमल के अलावा धनीराम इत्यादि का भी कुछ देना है। अभी रुपए का सुबीता नहीं। इन लोगों को किसी तरह दो-एक महीने रोके-थामे रहो। तब तक सरकार अवश्य कोई ऐसा क़ानून बना देगी, जिससे लाभ होगा, अन्यथा तब तक कोई और साधन निकल आवेगा।

चंदनलाल—राष्ट्र-संघ का मैंबर बनने के विषय में आपकी क्या आज्ञा है?

गुलाबसिंह—तुम बन जाओ, कोई हर्ज नहीं। मैं यदि मेंबर बनूंगा, तो मित्रों में और शायद अँगरेज़ों के सामने कुछ किरकिरी होगी। किसी दिन इन लोगों से कदाचित् फिर काम पड़े। हीरा को भी मेंबर बना लो; चाहो, तो बुद्धा को भी। अपने को आगे बढ़ा हुआ कहनेवाले लोग सहानुभूति करने लगेंगे। मैं धीरे-धीरे ज़मींदार-सभा का संगठन, चुपचाप, करूँगा, दोनो पक्ष मज़े में सध जायँगे।

चंदनलाल—मुझको बड़ागाँव के राष्ट्रसंघी अपना शत्रु समझते हैं। रोज लगान-वसूली के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न करने पड़ते हैं। घी टेढ़ी उँगलियों विना नही निकलता।

गुलाबसिंह—तुम्हारे लिये जमीदार-सभा का मेंबर होना उतना लाभदायक नहीं, जितना राष्ट्र-संघ का। बहती गंगा में हाथ धोना चाहिए। तुम लोग संघ के मेंबर बन जाओगे, तो अपना पक्ष प्रबल हो जायगा, लगान-वसूली में दिक्क़त न होगी, जोता शिकायत न कर पावेंगे। कायदे का हिसाब रक्खो। मुहर लगाकर रसीदें दे दो। एक पाठशाला खुलवाओ। नए पुस्तकालय की सहायता करो। उससे काम न चले, तो दूसरा खोल दो। मैने निश्चय कर लिया है।

चदनलाल—समझ गया, महाराज! गले मे आगे से खादी का रूमाल बाँधा करूँगा।

गुलाबसिंह—मेरा जीवन तो पहले से ही सीधा-सादा है। चने खाकर रह सकता हूँ। धरती पर लेट सकता हूँ। एक बार जगल मे मेरी मोटर खराब हो गई थी। सड़क के किनारे घास पर बैठकर खाना खाया था, और आनंद के साथ उसी घास पर बैठे-लेटे सिगरेट पीता रहा था। यह झमेला समाप्त हो ले, तो एकाध दिन शिकार का प्रबध तो करो चदनलाल!

चदनलाल—महाराज, वह तो जब चाहे, तब हो सकता है। एक बात पूछूँ? यह राष्ट्र-संघ और साम्यवाद क्या दो अलग-अलग बातें हैं?

गुलाबसिंह—हैं, और नही भी है। अँगरेजो को डराने के लिये राष्ट्र-संघ और देश को डराने के लिये साम्यवाद। साम्यवाद दरिद्रों की रोटी और लीडरों की लीडरी की पुकार है। और कोई अंतर नही। (मन मे) मैं भी साम्यवादी हूँ। रानी साहब तो उसको बर्तती भी नित्य है। चमारिने, जो पीसने आती हैं, उनमें से किसी को वह काकी कहती हैं, किसी को बाई और किसी को दीदी। बुद्धा को बुलाओ।.ओ बुद्धा!

(बुद्धा का प्रवेश।)

बुद्धा—सरकार!

गुलाबसिह—तू राष्ट्र-सघ का मेबर हो जा। तेरा चदा मैं दूँगा। बन सके, तो अपनी तनख्वाह से माहवारी थोड़ा-थोड़ा कटवाते रहना, नही तो देखा जायगा। समझा?

बुद्धा—सरकार!—सरकार—

गुलाबसिह—सिर क्यो खुजलाता है? मैं कहता हूँ। परंतु मेरा नाम मत लीजियो। भला दीवान साहब भी मेंबर बनेंगे?

बुद्धा—सरकार, वे लोग उल्टी-उल्टी बातें सिखलाते है। बहुत बहकाते हैं। कहते है, महीना बढ़वाओ, नही तो काम छोड़ दो, हवेली को छोटा झोपड़ा बना दो। महलों के छोटे झोपड़े कैसे बन जायंगे महाराज?

गलाबसिह—क्या बकता है बे?

बुद्धा—कहते हैं, तनखा बढ़वा लो, और काम मत करो वग़ैरा-वग़ैरा।

गुलाबसिंह—(हंसी को दबाकर) कहते हैं कि मुफ्त का खाकर तोंद बढ़ाओ ?

बुद्धा—सरकार, बहुत बुरी-बुरी बाते कहते हैं।

गुलाबसिंह—(ज़रा रुष्ट होकर) किसकी तोंद बे ?

बुद्धा—सरकार मैं मिंबर नही बनूगा।

गुलाबसिंह--उन लोगों की उल्टी बातें कभी मत सुन, पर मेंबर बन जा। जब मैनेजर साहब कहें, तब मेंबरी छोड़ देना। इसमें हमारी प्रसन्नता है।

बुद्धा—सरकार !

(बुद्धा का प्रस्थान।)

चंदनलाल—मैं सोचता हूं, जल्दी तो नही की जा रही है।

गुलाबसिंह—नही, बिलकुल नही। इसमे स्वरक्षा और परोपकार का सम्मेलन है। ज़मींदार-सभा के कर्णधारों को लिखता हूँ कि शीघ्र अपना काम आरंभ कर दें। प्रत्येक शाखा-सभा में एक घंटा बजानेवाला नौकर रक्खें। जैसे छपे हुए अक्षर में कुछ जादू रहता है, उसी तरह घंटा बजानेवाले के हाँके से जनता बहुत संख्या में, भेड़-बकरियों की तरह, एक ही जगह सिमट आती है। इस घंटा-घोष को सुनकर, कर्ज़ों के मिटाने का क़ानून पास होने के बाद, लोग ज़मींदारों के मिटाने की चिंता न करेंगे।

चदनलाल—आप बड़े-बडे लोग यदि उदार दल में शामिल हो जायँ, तो क्या नही बनेगा ?

गुलाबसिह—ढाई चावल की खिचड़ी अलग पकानेवाले, इन थोड़े-से विवेक-दभियों से दूर रहना चाहिए । उनका एकमात्र काम केवल समालोचना, केवल नुकता-चीनी है । अपने निज के हक के सामने इस दल के नेता अपने दल की भी परवा नही करते । कमिश्नर साहब एक दिन कहते थे कि इस दल में है तो कई मनुष्य बहुत योग्य, परंतु हैं अधिकांश प्रभाव-हीन । ये लोग ज़मीदारों के छिपे शत्रु हैं, और साहूकारों के स्पष्ट मित्र ।

चदनलाल—मैं भी ऐसा ही समझता रहा हूँ, सरकार ! उनसे तो हिंदू-सभा अच्छी ।

गुलाबसिह—हाँ, उसमें अधिक मनुष्य है, और हमी लोगों के आसरे चलती भी रही है, परतु वह पराजित आकांक्षाओं का श्मशान है, कुचले हुए हको का अरक्षित खँडहर । ब्रिटिश सरकार ने जमीदारों को ही सबसे प्रबल वर्ग समझा है । (नेपथ्य मे 'वदे मातरम्') (जरा चौंककर) फिर वही हल्ला ।

चंदनलाल—सरकार, उस नेता को क्या ब्यालू के लिये बुलाना होगा ?

गुलाबसिह—नही । उसके डेरे पर ही खाना भेज देना चाहिए, इतना कि पांच-छ आदमी पेट-भर खा लें । इसका

अधिक अच्छा प्रभाव पडेगा। कल नगर में इन सबका एक जलूस निकलवा देना। समझे ? तुम लोग जलस में रहना तो, परंतु ज़रा पीछे। आज जो मभा होनेवाली है, उसमें जाना।

*

दूसरा अंक

स्थान—बडागाँव से बाहर, गाँव से
थोडी दूर, लगा हुआ जगल।
समय—सध्योपरात

(जगल से पहले खुला मैदान। मैदान के एक किनारे एक मेज और लोहे की दो कुर्सियाँ रक्खी हुई है। मेज पर एक कम कीमती, रग-बिरगा कपडा बिछा हुआ है। मेज पर एक बडी हाथबत्ती, प्रकाश के लिये। स्त्री-पुरुषों की एक खासी भीड गुल-गपाड़ा कर रही है। उस भीड मे हीरा भी है। भीड मे मेज-कुर्सी के पास सगुनचद बैठा है।

सगुनचंद—देखो भाइयो! शोर मत करो। इतना गोलमाल करने से राष्ट्र को हानि पहुँचती है। ध्येय को धक्का लगता है। चुप करो। (शोर बद होता है, केवल थोडी-सी कलकल रह जाती है।)

सगुनचंद—(बैठकर पास मे बैठे हुए एक व्यक्ति मे) अब सभा की काररवाई आरभ कर देनी चाहिए। पहले किसी को सभापति बना लीजिए। उसे मेरा परिचय देना होगा। फिर मैं बोलूँगा।

वह व्यक्ति—आप ही सभापति बन जाइए, और आपके सब गुण हम सब लोगो को मालूम नही है, इसलिये आप ही अपना परिचय भी दे दीजिए।

सगुनचद—न। राष्ट्र-सघ की बड़ागाँव-शाखा के प्रधान को इस सभा का सभापति चुन लीजिए। आप उनका प्रस्ताव करिये।

वह व्यक्ति—ठीक है, ठीक है। आप उनसे कह दीजिए।

सगुनचद—(खडे होकर) श्री धनीरामजी, जो एक योग्य व्यक्ति और देश-प्रेमी है, और जो स्थानीय शाखा के प्रधान हैं, इस सभा के सभापति का आसन ग्रहण करेगे।

(धनीराम आधा खड़ा होकर समर्थन
की प्रतीक्षा मे इधर-उधर ताकता है।)

सगुनचद—आप आसन ग्रहण करे। समर्थन के लिये न अटके।

(धनीराम सगुनचद के पास आता है।)

धनीराम—अब आप अपना व्याख्यान दे।

सगुनचद—मैं व्याख्यान देता हू। वैसे तो लोग मुझे जानते हैं, परंतु आप मेरा थोड़ा-सा परिचय और दे दे।

धनीराम---(मेज के पास खडे होकर) भाइयो, आज बड़ा शुभ अवसर है। श्रीसगुनचंदजी हमारे बडे नेता है। वह सबका उपकार करने पर कमर कसे रहते है, जैसा कि आप सब लोगों ने देखा भी है। उन्होंने देश के लिये बड़े-बड़े दु:ख सहे है, और महान् त्याग किए है, जैसा कि आपने समाचार-पत्रों मे पढा होगा, अर्थात् जो आप लोगो में से पढ़ सकते है। हमारे राजा साहब, जो बडे सज्जन है, और परोपकार में लगे रहते हैं, और बहुत दान दिया करते है, और बड़े विद्वान हैं, और--

एक व्यक्ति---और जिन पर आपका ऋण है—

धनीराम—ठहरो भाई! और, उन्होने भी हमारे नेता का आदर-सत्कार किया है। श्रीसगुनचद जमींदारी के विरुद्ध बहुत अच्छे उपदेश देंगे। ध्यान से सुनिए। बीच में टोकिए मत। (कुर्सी पर बैठता है।)

(श्रोता शोर करते है।)

सगुनचद—बहनो और भाइयो! मनुष्य-मनुष्य सब एक हैं, परन्तु तुम्हे एक बार भी भर-पेट भोजन मिलना कठिन है। (शोर बद होता है।) तन पर लत्ते लगाये फिरते हो बीमारी के समय तुम्हें दवा-दारू नहीं मिलती। अपने बच्चों को छटांक-भर दूध भी नहीं दे सकते। संक्रामक रोगों के फैलते ही कीड़ों-मकोड़ों की तरह मरते हो जमीदार, साहूकार, वकील, सभी तुम्हें खाए जा रहे हैं। तुम इतने निर्बल क्यों

हो ? (ठहरता है। फिर और जोर से कहता है।) तुम वास्तव में निर्बल नहीं हो। अपने भीतर प्रचंड बल का अनुभव करो। अपने को सँभालो। गुलामी की साँकलों को तोड़कर फेंक दो। शुभस्य शीघ्रम्। अपने हकों के लिये लड़ मरो। अत्याचारियों का कचूमर निकाल दो। अपनी भुजाओं को उठाओ। संसार में तुम्हारा कोई मुक़ाबिला न कर सकेगा।

एक ग्रामीण—श्रीमान्‌जी, हमको जंगल से घास नहीं मिलती। लकड़ी के लिये तरसते है। हमारे ढोर ज़रा इधर-उधर भटके कि मवेशीख़ाने मे ढकेल दिए गए। लगान दे नहीं पाते। दे भी देते हैं, तो पली-पलाई ज़मीन को ज़मींदार छीन लेते है। हमसे और हमारी स्त्रियों से बेगार ली जाती है।

सगुनचंद—आकाश, पृथ्वी, जल, पवन और अग्नि को ईश्वर ने बनाया है, ज़मींदारों ने नहीं। परिश्रम का पसीना बहाकर जो इनको अपने हाथ मे ले, उसी के ये है। किसान-सभा बनाओ। मेंबरों की भर्ती करो, और करो संगठन। सब सुबीते तुम्हारे हाथ आ जायँगे।

ग्रामीण—हम लोगों को लकड़ी और घास तो आज चाहिए।

प्रधान—वह कहते तो हैं कि परिश्रम करो। कुल्हाड़ी से जंगल कटता है, और हँसिया से घास।

अनेक ग्रामीण—ठीक है, ठीक है।

सगुनचद—इसमें कोई सदेह नही कि जगल, घास इत्यादि सब तुम्हारा है, परतु कल राजा साहब को सूचना दे देना। वह न रोकेंगे। समझ से काम लो।

एक ग्रामीण—ज़मीदारी-प्रथा का नाश हो ।

धनीराम—ज़मीदारी-प्रथा का तो नाश होना ही चाहिए। परतु राजा साहब सज्जन है, वह कष्ट न देगे।

कुछ ग्रामीण—ज़मीदारी-प्रथा का नाश हो ।

एक ग्रामीण—और साहूकारी का।

धनीराम—साहूकारी का ? समय पर रुपया कहाँ से मिलेगा ?

कुछ ग्रामीण—जमीदारी का नाश हो। साहूकारी का नाश हो ।

चदनलाल—भाइयो ! जल्दी मत करो। राजा साहब और हम सब तुम्हारे है। उतावली में काम बिगड जायगा।

(सकोच करती हुई भीड़ मे हीरा खड़ी होती है। शोर होता है।)

सगुनचंद—भाइयो ! शोर मत करो। श्रीमती हीराजी कुछ कहेंगी। ध्यान से सुनो।

(शोर कुछ कम होता है।)

हीरा—हम लोगो की तनखा बढनी चाहिए। राजा साहब बढ़ानेवाले भी है धीरे-धीरे। परतु ज़मीदारी-प्रथा का नाश न होना चाहिए। हम लोग कहाँ ठिकाना पावेगे ? (बैठ जाती है।)

एक ग्रामीण—इसे राजा साहब ने सिखा-पढ़ाकर भेजा है।

सगुनचद—ठहरो, ठहरो। गड़बड़ मत करो। पहले संगठन करो। ज़मीदारी का नाश किसी दिन अवश्य होगा, परंतु धीरे-धीरे। पहले प्रबल बनो।

एक ग्रमीण—वही तो कहते है। परतु आज आपके यहाँ रहते यदि लकडी और घास न मिली, तो कल हमारी कौन सुनता है? राजा के मनीजर साहब यहाँ बैठे है। इनसे पूछिए कि एक-एक पूला घास और एक-एक सूखी लकड़ी के लिये इन्होंने कितने गरीबो को, स्त्रियो तक को, कितनी बार जानवरों की तरह पीटा है?

धनीराम—ओफ्! ओफ्!

चदनलाल—घास-लकडी के लिये हमने कभी मना नही किया।

(हीरा कुछ कहने के लिये खडी होती है।)

कुछ ग्रामीण—बैठ जाओ। (हीरा बैठ जाती है।)

धनीराम—भाइयो, विश्वास रक्खो। घास, लकड़ी के लिये यह तुम्हे कभी न रोकेंगे।

एक ग्रामीण—तो आरंभ कर देना चाहिए, जिससे मार्ग खुल जाय।

कुछ ग्रामीण—जंगल अभी कटना चाहिए।

सगुनचंद—रात को ऐसी क्या जल्दी पड़ी है? सबेरे काट लेना। मैनेजर साहब आपस में समझौता कर लेंगे।

एक ग्रामीण—श्रीमान् ! अब ठहरना क्या ? आप ही ने कहा था कि शुभस्य शीघ्रम् ।

कुछ ग्रामीण—शुभस्य शीघ्रम्, शुभस्य शीघ्रम् ।

धनीराम—(सगुनचद से) लोग आपे मे बाहर होते जा रहे हैं । इन्हें सँभालिए ।

चदनलाल—आप लोगो को बिना इजाज़त के सरकारी जंगल न काटना चाहिए ।

सगुनचद—ज़गल तो सरकारी नही है ।

चंदनलाल—राजा साहब ने चंदा देने का वायदा किया है । वह राष्ट्र-संघ के साथ हैं । जलूस निकालने में उन्होंने सहायता की थी ।

धनीराम—वह वायदे को शायद पूरा भी करेंगे ।

एक ग्रामीण—मालूम होता है, उन्होंने पहले से ही किसी की मुट्ठी गरम कर दी है ।

सगुनचंद—यह आक्षेप बहुत अनुचित है ।

ग्रामीण—आप ही ने तो बतलाया था कि ब्रिटिश सरकार और उसके पिट्ठू रिश्वत देकर हमारे देश के आदमियों को फोड लेते है ।

(शोर होता है ।)

सगुनचंद—इस भ्रम में मत पड़ो । यहाँ ऐसा कोई नही ।

कुछ ग्रामीण—काटो जंगल । जगल काटो । कुल्हाड़ियाँ हमारे पास हैं ।

धनाराम—इस समय तो इस अनर्थ का जरा रोकिए, श्रीमान्जी ।

[सगुनचद सोचता है ।]

ग्रामीण—महाशयजी, मैं भी कुछ बोलना चाहता हूँ ।

सगुनचद—(धनीराम से धीरे से) बोल लेने दीजिए । बोलने से हृदय की कुछ गरमी कम हो जायगी । (ग्रामीण से) आप बोलिए ।

ग्रामीण—देखिए, आपने समझाया है कि मनुष्य मनुष्य सब एक है, फिर रघुआ चमार और राजा साहब में क्या अतर है ? भाइयो ! ऐसा प्रयत्न करो, जिसमें रानी साहब को अपने हाथ से चक्की पीसनी पड़े । वह पिसाई के बदले में कुछ नही देती, रघुआ चमार रानी साहब से चक्की पिसवाकर दो पैसे देगा । हम लोगो का खून चूस-चूसकर राजा साहब का तोद बढ गया है । उसे फोड दो । इसके बिना गुलामी की साँकले न टूटेगी ।

कुछ ग्रामीण—ठीक कहा । ठीक कहा ।

हीरा—क्या ठीक कहा ? बड़े घराने की स्त्रियो के विषय में ऐसी बात कहनेवाले के मुँह मे आग लग जाय ।

(हीरा का वेग के साथ प्रस्थान ।)

सगुनचद—हमारे भाई ने जो बातें कही हैं, वे विचार करने योग्य है । वह जोश मे आकर कुछ ऐसा कह गए हैं, जो बहुत ज्यादा उचित नही । हम जनता के जोश के साथ है ।

लोकमत मे बँधे हुए हैं। परतु हम यह नम्र निवेदन अवश्य करेंगे कि ज़िम्मेदारी का ख़याल रखकर व्याख्यान देना चाहिए। परतु इसमें भी कोई सदेह नही कि ग़रीब जनता बहुत दिनों से कुचली जा रही है, उसके कष्टो की सीमा नही और ज़मीदारों की दुष्टताओ का, उनके जुल्मों का पारावार नहीं। परतु जीभ पर लगाम लगानी चाहिए, और काम-काज की बात सोचनी चाहिए।

ग्रामीण—आप राजा साहब की वकालत क्यो करते है? रह गई हमारी बोली की बात, सो हम लोग अपढ गँवार है। उसी बात को आप लोग शहद मे लपेटकर कहते है, और हम लोग मट्ठे मे डुबोकर।

चदनलाल—(खड़े होकर) मै भी राष्ट्र-संघ का मेंबर हूँ। मेरी भी कुछ सुनिए।

ग्रामीण—देशद्रोही है। पाजी है। बैठ जा। बैठ जा।

एक मुसलमान ग्रामीण—(कुछ ज्यादा अच्छे कपडे पहने, नगर के सपर्कवाला) एक अर्ज़ मेरी भी सुनिए। अक़िल से काम लीजिए। जल्दबाज़ी मत करिए। हमको साथ लिए वग़ैर आप एक क़दम भी नही बढ़ा सकते। हमें साथ लीजिए, और दो दिन में सौराज हासिल कीजिए, वरना हमारे एक बडे मालदार लीडर ने, जिनको बड़े-बडे ख़िताब भी मिले हैं, और जिनकी पखा-टट्टी इत्र से छिड़की जाती है, साफ़ कह दिया है कि अगर हमारे कहने पर न चलोगे, तो मुसलमान सिर्फ़

मुसलमानो की बनाई हुई चीजो और मुसलमानी रुपयों का इस्तेमाल करेंगे, वे चाहे इस मुल्क के हों, चाहे इस मुल्क से बाहर पाँच हज़ार कोस के हो।

एक वृद्ध मुसलमान ग्रामीण—यह सब नई बातो का ज़माना है, इसलिये चाहे जो कुछ कह लो, वरना मेरी राय तो यह है कि सब बुड्ढे हिंदू-मुसलमानो को गोली से मार दो, और फिर एक दूसरे को खा जाओ।

एक नौजवान मुसलिम देहाती—हिंदू-मुसलमानो को लड़ाने-भिड़ानेवाले स्वार्थी हिंदू और मुसलमान सब धीरे-धीरे मरे जाते या बेकार हुए जाते हैं। मादरे-हिंद की इज्ज़त बनाए रखने के लिये हम नौजवान मुसलमान उठ रहे है। इत्मीनान रखिए।

कुछ ग्रामीण—उठो, जगल काटो।

सगुनचंद—जो भी काम करना हो, पहले बहुमत से उसका प्रस्ताव पास करो। गड़बड मत करो।

ग्रामीण—मैं यह प्रस्ताव पास करना चाहता हूँ कि ज़मीदारी का नाश हो, और हमको जंगल-वंगल काटने और ज़मींदारी के सब हक़ मिलें।

दूसरा ग्रामीण—मेरे भी मन में यही बस रही है।

धनीराम—कोई इस प्रस्ताव के विरुद्ध है?

वृद्ध मुसलमान ग्रामीण—क्या धरा है विरोध करने में? भेड़िया-धसान में कोई किसी की सुनता भी है?

(प्रस्थान ।)

धनीराम—सर्व-सम्मति से प्रस्ताव पास होता है। परन्तु भाइयो ! मेरी विनती है, आज इस काम को मत करो। कल देखा जायगा। घर चलो।

(चंदनलाल का प्रस्थान।)

अधिकांश ग्रामीण—(खड़े होकर) शुभस्य शीघ्रम्।

(ग्रामीण कुल्हाड़ियाँ सँभालकर जंगल की ओर जाते और जंगल काटना आरंभ करते हैं। स्त्रियाँ अपने घरों को जाती हैं।)

धनीराम—(सगुनचंद के निकट आकर) यह अच्छा नहीं हुआ। लेन-देन के ऊपर से रावसाहब यों ही मुझसे कुछ मन-मुटाव रखते हैं, वह समझेंगे, यह सब मैंने करवाया है।

सगुनचंद—आप क्यों डरते हैं ? मना करने पर भी लोग इसलिये नहीं मानते कि वे अपने हक़ों को पहचानने लगे हैं। युगों की दासता की बेड़ी जब टूटती है, तब उसमें से झंकार आती है। हम लोगों का कर्तव्य जनता को सीधा मार्ग बतलाने का है। यदि वह टेढ़े-तिरछे मार्ग पर ही जाना चाहती है, तो हम उसे छोड़ नहीं सकते। हर हालत में हमको उसके साथ चलना है। बहे, तो बहना है। कम-से-कम हमारे बड़े नेताओं ने जब तक नहीं रोका, तब तक जंगल काटने में मैं भी जनता का साथ दूंगा, नहीं तो वह समझेगी कि

हम उसके नेता नही, और हमने राजा साहब का कुछ खा लिया है।

(सगुनचद जगल काटनेवालो मे जा मिलता है। धनीराम सिर खुजलाता हुआ वही टहलता है। गुलाबसिह ज़रीदार अचकन, रगीन पाजामा और लहरिया का साफा बाँधे, बेत हाथ मे लिए आता है। चदनलाल पीछे-पीछे।)

गुलाबसिह—(बेत हिलाकर) यह क्या है ? यह क्या है ?

धनीराम--रावसाहब, यह जागी हुई जनता का पहला अभ्यास है। मै समझाया करता था कि अपना काम स्वय सँभालिए, आडबरो को छोड़िए, और जनता को घास, लकड़ी आदि का कष्ट मत होने दीजिए, परतु आप सदा कारिदो के ही भरोसे रहे।

गुलाबसिह—मैं जानता हूँ, तुम धूर्त हो। चदनलाल, थाने में चोरी से जगल काटने की रिपोर्ट करो। अभी जाओ।

चदनलाल—अब सबको अपने-अपने किए का फल मिलता है।

(चदनलाल का प्रस्थान।)

धनीराम—ये लोग डाका नही डाल रहे है। और, ये तो आपके कहने से ही मान जायँगे। ज़रा इनसे अच्छी तरह बोलिए। वर्ष-भर में एकाध बार इनके घरों पर सुख-दुख में हो आइए—वे अपने प्राण आपके ऊपर न्यौछावर कर देंगे।

गुलाबसिंह—आपको इन्हें जितना बहकाना हो, बहका लीजिए। आज हमारे ऊपर वार है, तो कल आपकी बारी आवेगी, चाहे रोज़ हो आप इनके घरों पर हाज़िरी देते फिरे।

घनीराम—हमें इसकी बहुत कम परवा है। जो कुछ हमारे पास है, इन्हीं से कमाया है। यदि फिर इन्हीं के पास लौटकर चला जाय, तो हमें बहुत वेदना न होगी! आप अपनी चिंता करिए।

गुलाबसिंह—सेठजी, हमारे पुरखों ने जागीर सिर कटवाकर पाई थी। विना सिर कटे जागीर वापस न जायगी। (जंगल काटनेवाली भीड़ के पास जाकर) तुम लोगों में कोई लाज बाक़ी नहीं रही। जिन हरे-भरे पेड़ों को काट रहे हो, वे बच्चों की तरह पाले-पोसे गए हैं। पहले मुझे काटो, तब उन्हें काट सकोगे।

(घनीराम का प्रस्थान।)

एक ग्रामीण—लकड़ी और घास का अब और कष्ट नहीं सह सकते। यह जंगल हमारा है।

दूसरा ग्रामीण—आप हमसे चंदा लेकर इस जंगल की रखवाली करनेवाले सिपाही को तनखा देते आए हैं। हमारा जंगल न होता, तो उस सिपाही की तनखा आप अपनी गांठ से न देते?

(थानेदार का वर्दी में प्रवेश। पीछे-पीछे
गाँव का पटवारी और चंदनलाल। कुछ

ग्रामीण भाग जाते है, और कुछ कटाई बद
करके वही खडे रहते है ।)

थानेदार—सबको गिरफ्तार करूँगा। यह पुलिस की दस्तदाजी का मामला है। (गुलाबसिंह से अलग) वैसे तो आज-कल हम तरह देते है—आँख बचाते है। आज्ञा है। पर मौक़ा मिलने पर छोड़ते नही। लोग हमें कुछ समझते ही नही।

सगुनचद—आप किस जुर्म में गिरफ्तार करते है, थानेदार साहब ?

थानेदार—जगल राजा साहब की निजी संपत्ति है। उसे ज़बरदस्ती काटने से चोरी के जुर्म में।

सगुनचंद—यह आपसे किसने कहा कि यह जगल राव-साहब की निजी सपत्ति है ?

थानेदार—रावसाहब ने। पटवारी ने। उसे साथ लाया हूँ।

एक ग्रामीण—जगल ईश्वर का है। हमारा है। हम सदा से इसकी लकडी काटते आए हे। रखवाले की तनखा हम लोग देते आए है।

पटवारी—मेर काग़ज़ में यह पड़ती और जगल लिखा हुआ है।

थानेदार—किसका ?

पटवारी—पडती और जगल का मालिक ज़मीदार होता है। परतु दश्तूरदेही में—

थानेदार—दस्तूरदेही में क्या जी ?

ग्रामीण—लाला, ठीक-ठीक पढ़कर बतलाना । राजा साहब को मत डरना । हम तुम्हारे साथ है ।

पटवारी—दस्तूरदेही में गाँववालो के लिये एक बँधी तादाद में, अपने ज़रूरी काम के लिये, लकडी और घास लेने का हक दर्ज है ।

सगुनचद—क्या आप अब भी गिरफ्तारी का हठ करेंगे ?

थानेदार—अवश्य । मेरे पास रिपोर्ट चोरी की है ।

सगुनचद—तब सबसे पहले मुझे हथकड़ी पहनाइए । इन ग़रीब किसानों का कोई दोष नही ।

थानेदार—लेकिन मैं आपको खूब जानता हूँ । आप विद्वान् है । योग्य है । चोरी नही कर सकते । आपने लकड़ी नही काटी । मै आपको नही छूऊँगा ।

एक ग्रामीण—मै सही चोर । मुझे पकड़ लीजिए ।

थानेदार—(दांत पीसकर) हूँ ! हाँ । खैर, अच्छा !

सगुनचंद—लाओ जी, तुम अपनी कुल्हाड़ी मुझे दो । मैं काटता हूँ । देखूँ, कौन पकड़ता है ?

(सगुनचद कुल्हाडी लेकर पेड काटने जाता है ।)

थानेदार—(पीठ फेरकर, गुलाबसिंह से) मै कुछ नही कर सकता रावसाहब, इस समय । ज़रूरत पड़ने पर फिर आ सकता हूँ । मुझे एक कार खास के लिये जाना है । (स्वगत) बलवा होते ही आऊंगा ।

(प्रस्थान)

गुलाबसिंह—अपनी बपौती को इस निर्दयता के साथ नष्ट किया जाता देखकर खून जल उठा है। चलो चंदनलाल, अपने सिपाहियों को हथियार समेत ले आवे।

चंदनलाल—ये लोग विना पिटे थोड़े ही मानेंगे।

(गुलाबसिह और चदनलाल का प्रस्थान।)

सगुनचद—भाइयो, हम लोगो ने काफ़ी तौर पर अपनी हिम्मत दिखला दी। हमने ससार को प्रमाणित कर दिया है कि हम शेर-बच्चे है। परतु अब हमे रुक जाना चाहिए। अहिसा हमारा परम धर्म है! हम लोग लाठी-तलवार की लड़ाई नही लड़ते। सत्य हमारा सबसे बड़ा हथियार है।

एक ग्रामीण—श्रीमान्, हाथ चलाने से शरीर मे गर्मी आ गई है। अब उसे ठडा न होने देगे। हम लोग लाठी-तलवार से नही लडते, कुल्हाड़ी से लड़ते है, क्योकि वही हमारा सदा का हथियार है। राजा साहब सिपाहियो को लाने की धमकी दे गए है, क्योकि थानेदार ने उनका साथ नही दिया। आने दो सिपाहियों को। एक दिन तो मरना ही है।

सगुनचद—यह अहिसा नही, खून-खराबी है। कदापि न होने दूंगा।

वही ग्रामीण—आप ही तो कहते थे कि कभी मरना है। हम कहते हैं, मारकर मरना है। आज ही मरेंगे, और मार-कर मरेंगे, यों ही नही मरेंगे।

पटवारी—दस्तूरदेही में साफ़ लिखा है । मैं किसी से नही डरा । ठीक-ठीक कह दिया ।

एक ग्रामीण (दूसरे से, अलग)—पटवारी को कल चंदा करके दो रुपए घर पर ही दे आना । उसने आज रावसाहब की खासी मूंछ काटी ।

(गुलाबसिंह का हथियारबंद
सिपाहियों के साथ प्रवेश । सिपाही मुंगिया
कपड़े पहने । चंदनलाल साथ मे ।)

गुलाबसिंह—मारो, एक को भी मत छोड़ो ।

(पटवारी का प्रस्थान ।)

सगुनचंद—मारो, मैं आपके सामने खड़ा हूँ ।

गुलाबसिंह—आप हमारे मेहमान है । आप पर दया आती है । देखना तो गांव के इन भूतों को है ।

सगुनचंद—रावसाहब, यदि ये भूत है, तो आप तो समझदार है । थोड़ी-सी लकड़ी के लिये क्या मनुष्यों का खून बहाना चाहिए ?

गुलाबसिंह—हमारा अपमान, हमारा सरासर अपमान । हमारे देखते हमारी हरी डाल पर कुठाराघात ! आप इतने बड़े नेता होकर ऐसा ओछा काम कराते हैं !

सगुनचंद—दिन-भर पसीना बहाकर जिनको एक बेला भी भरपेट भोजन नहीं मिलता, उनके लिये क्या आपका कलेजा ज़रा भी नहीं पसीजता ?

चंदनलाल—दया के समय दया और दंड के समय दंड, यह राजधर्म है।

सगुनचंद—अब भी आप लोग राज्य और राजा के भ्रम में भूले हुए हैं। बाहर के लोग मजे में सब कुछ हरण किए चले जा रहे हैं, एक आँख तरेर देते हैं, तो आप लोगों का पसीना छूट जाता है। इस पर भी राज्य! और राजधर्म! क्या आप लोगों ने कभी इस खोखली गूँज पर ध्यान दिया?

ग्रामीण—पृथिवी ईश्वर की, जंगल हमारा। हम इसको साफ करेंगे।

सगुनचंद—ठहरो। बेहूदगी मत करो।

एक ग्रामीण—ठहर क्यों? तुम्हारी जलेबी को राजा ने कुछ शीरा पिला दिया हो, तो तुम ठहरो। (जंगल काटता है।)

गुलाबसिंह—मारो, मारो।

(ग्रामीण कुल्हाड़ियाँ तानकर गुलाबसिंह के सिपाहियों पर लपकते हैं। बहुत शोर होता है। थानेदार का कास्टेबिलों-सहित प्रवेश।)

थानेदार—गिरफ्तार करो, इसको, इसको, इसको।

(कास्टेबिल कुछ ग्रामीणों को गिरफ्तार करते हैं।)

सगुनचंद—मुझे भी। मैं प्रमाणित करूँगा कि मैंने रावसाहब से कोई रिश्वत नहीं ली।

गुलाबसिंह—हाँ, हाँ, इनको भी। और, धनीराम को, पर वह तो पहले ही कहीं चला गया।

थानेदार—क्षमा कीजिएगा राजा साहब, मैं पूछता हूँ, आप अपने सिपाहियों को हथियारों से साजकर क्यों ले आए ?

चंदनलाल—अपनी जायदाद की रक्षा के लिये, हुजूर ! परन्तु उन लोगों ने किया कुछ भी नहीं। (कुछ संकेत करता है।)

थानेदार—ओ ! हाँ ! ठीक है। फ़िलहाल राजा साहब के आदमियों की गिरफ्तारी न होगी। रावसाहब, आप अपने आदमियों को लेकर यहाँ से जायँ।

(गुलाबसिंह का अपने सब आदमियों के साथ प्रस्थान। चंदनलाल रह जाता है। थानेदार को संकेत करता है।)

थानेदार—श्रीसगुनचंद को यहाँ से ले जाओ। दूर छोड़ आओ, वरना कोई इन पर वार कर बैठेगा।

सगुनचंद—मैं यहाँ से न हटूँगा। मैं भी हवालात में जाऊँगा।

थानेदार—ले जाओ इनको यहाँ से।

(कांस्टेबिल सगुनचंद को पकड़कर ले जाते हैं।)

चंदनलाल—हुजूर, यह नेता बड़ा पाजी है। सब कर्म इसी का कराया हुआ है।

थानेदार—तुमने भी बहुत ज्यादती की है। यदि ऊपर से आदेश आया, तो न-मालूम मुझको तुम लोगों में से किसे-किसे पकड़ना पड़ेगा।

चंदनलाल—(एक ओर हटाकर, अलग) आपके मिठाई खाने

को दो सौ रुपए। स्वीकार कीजिए, और इन भूतो की कसकर मरम्मत कर दीजिए।

थानेदार—मैं दो-चार रुपल्ली पर नियत डिगानेवाला थानेदार नही हूँ। फिर फक-फूककर कदम रखना पडता है। इसके सिवा अपने बेडे के सिपाहियो की रोटी का भी ध्यान रखता हूँ। अकेले ही पापी पेट नही भरता। और भाई, मैं तो ऐसा लेता हूँ कि तुम्हारा काम भी बन जाय, और ऊपर के आदेशों का रुख भी निभ जाय। भले आदमियो की सहायता करने को तो मैं तैयार ही रहता हूँ।

चदनलाल—कुछ और बढ जायगा। मान जाइए। राजा साहब के ऊपर बहुत ऋण है। किसानो ने लगान देना बद कर दिया है। किसी तरह कठिनाई से काम चलता है। आपके लिये भी कही से प्रबध करना पडेगा। मैं तो आपका सेवक हूँ।

थानेदार—खैर, कोई बात नही। राजा साहब मेरे मित्र है। जो कुछ बन सकेगा, उनके लिये अवश्य करूँगा। मेरे सिपाहियों के लिये भी कुछ कर दीजिएगा। पटवारी को भी हाथ में लिए रहना पड़ेगा। नए आवरे मे.वह अपने सारे पुराने ऐब छिपाए हुए है। उसकी दस्तूरदेही से होशियार रहना।

चदनलाल—बहुत अच्छा हुज़ूर। इन बदमाशों को अव की बार जरा अच्छी तरह समझ लीजिए। इनकी सभा का मेंबर हो जाने पर भी इन्होंने मेरी कोई परवा नही की।

थानेदार—मैं भी मेंबर हो जाता। थोड़ा-सा लाभ था। परन्तु हमारे साहब कहते थे कि हम तो शासन के डंडे को पूजते हैं, शासकों से कुछ मतलब नहीं। इसलिये मेंबर नहीं बन सकते।

चन्दनलाल—इन लोगों को शीघ्र हवालात में ले जाइए, नहीं तो कोई भीड़ आकर उपद्रव ठान देगी।

थानेदार—मैं गोली चला दूंगा—परंतु नहीं, आजकल ऐसा होना असभव है। तुम भी जाओ, और प्रबंध करो। इन लोगों को हवालात में दाखिल करके मुझे पेड़ों की गिनती करने और मौक़े का नकशा बनाने के लिये फिर आना पड़ेगा।

(गिरफ़्तार देहातियों को लेकर कांस्टेबिलो-सहित थानेदार का प्रस्थान। एक कांस्टेबिल लालटेन और मेज़ पर का कपड़ा उठा ले जाता है।)

चंदनलाल— (कटे हुए पेड़ों के पास जाकर) पेड़ तो चार ही पाँच कटे हैं। चार-पाँच रुपए के। परन्तु अपमान लाखों का हो गया। राजा साहब से छ सौ रुपए लिए बिना काम नहीं चलेगा। कुछ अपने भी काम आवेगा। वैसे तो कोई वेतन बढ़ाता नहीं।

(गुलाबसिंह का प्रवेश।)

चंदनलाल—आप क्यों लौट आए? समस्या गभीर हो गई है। थानेदार रिपोर्ट भेज रहे हैं, और कहते हैं कि ऊपर से

आज्ञा आने पर हम लोगों के ख़िलाफ़ भी कारवाई की जायगी। बलवे का मुक़दमा चलेगा।

गुलाबसिंह—चले। मुझे चिंता नहीं। मैं बलवे या बलवे के मुकद्दमे से नहीं डरता। इस समय तुम्हारी ही खोज में आया हूं। उस सगुनचंद ने एक तार लखनऊ भेजा है। तार में लिखा है—ज़मींदार का भारी अत्याचार, किसान मारे गए, बदूकें, गोलियाँ चलीं। इसका प्रतिबंध होना चाहिए।

चंदनलाल—अभी लीजिए, परंतु पहले थानेवालों के लिये पाँच सौ-छः सौ रुपए का प्रबंध करना पड़ेगा।

गुलाबसिंह—क्यों? हमारे आदमियों ने ऐसा क्या किया है कि हम रिश्वत दें?

चंदनलाल—बलवे के अभियोग में गिरफ्तारी हो जायगी, सरकार! इज़्ज़त का सवाल है, पुरखों की कमाई हुई इज़्ज़त का। राष्ट्र-संघवालों को उसकी कोई परवा नहीं, परंतु हमें तो है।

गुलाबसिंह—उसे तुम सँभालना। जितना कम खर्च हो, करना। अभी तो यह बतलाओ कि उस तार के विषय में क्या किया जाय? कहीं से कोई इकतर्फ़ा काररवाई न हो उठे! उसका प्रतिबंध?

चंदनलाल—उसका प्रतिबंध है। मैं भी जाकर अभी एक तार देता हूँ। उसमें लिखता हूँ—लूट-मार, जंगल काट लिया गया, बग़ावत, हथियार-बंद किसान।

गुलाबसिह...ठीक है। तार दे दो। मेरे सिर में आग-सी लगी है। टहलूँगा। तार देकर यही आओ।

चंदनलाल—आप अकेले और निहत्थे है यहाँ।

गुलाबसिह—मेरा कोई बाल बाँका नही कर सकता। मेरा ही घर लुटे, और मैं डरूँ ? धिक्कार है ! जाओ।

(चदनलाल का प्रस्थान।)

(दूसरी ओर से थानेदार का प्रवेश।)

गुलाबसिह—(छाती पर हाथ रखकर) मै तैयार हूँ। काफ़ी अपमान हो चुका है। जो कसर रह गई हो, उसे आप पूरा कर लीजिए।

थानेदार—विश्वास रखिए राजा साहब, चाहे जो कुछ हो, परंतु आपकी बेइज्ज़ती अपने हाथों न करूँगा।

गुलाबसिह—(शिथिल पडकर) मुझे आपसे यही आशा है। क्षमा कीजिएगा, मुझे इस समय ताव है।

थानेदार—सगुनचद ने सरकार को तार दिया है—बिल कुल झूठा, परतु काफी सकट-जनक। मालूम है ?

गुलाबसिह—मालूम है। मैंने भी एक तार अभी दिल्वाया है।

थानेदार—वह क्या ?

गुलाबसिंह—लूट-मार, जगल काट लिया गया, बग़ावत, हथियारबद किसान।

थानेदार—आपने बहुत उचित और सच्चा तार दिया।

परंतु उसमे एक कसर रह गई है। यदि डाकघर में तार न पहुँचा हो, तो उसमें ये शब्द जोड़ दीजिए—हम स्वरक्षा से भी बाज़ रहे।

गुलाबसिंह—खूब। बिलकुल ठीक। मै जाता हूँ। यहाँ आप क्या मेरे पास आए थे ?

थानेदार—नही, राजा साहब, मै तो मौके की जाँच-पड़-ताल के लिये आया था। आप शीघ्र जाइए।

गुलाबसिंह—(जाते-जाते) मैने सोचा था, अगले साल इस जगल को काटकर एक नई कोठी बनवाने के काम में लाऊँगा। खैर। (प्रस्थान।)

(थानेदार कटे हुए पेड गिनने के लिये जगल मे घुसना है, और वहाँ मे ओट के कारण दिखलाई नही पडता। वर्दी मे एक कांस्टेबिल का प्रवेश। पीछे-पीछे धनीराम और दो वृद्ध ग्रामीण।)

धनीराम—भाई साहब, क्या थानेदार साहब इसी ओर आए है ?

कांस्टेबिल—मै क्या जानूँ ?

एक ग्रामीण—उनसे काम है। आपको उनका पता मालूम होगा। बतला दीजिए।

कांस्टेबिल—मैं तुम्हारे बाप का नौकर हूँ ?

धनीराम—नौकर आप इनके बाप के तो न थे, पर इनके हैं। देखो, मैं तुमसे लड़ने के लिये नहीं आया हूं। थोड़ा वेतन पानेवाले लोगों के पक्ष में हूं, और इस समय तो तुम्हें कुछ लाभ हो जायगा, और इन ग़रीबों का उपकार।

कांस्टेबिल—(कुछ कहने के लिये तनता है, फिर ज़रा सिर झुकाकर और सयम के साथ।) इस जगल में ढूंढ़ता हूं, शायद हो।

(कांस्टेबिल जगल मे जाता और थानेदार को लिवा लाता है।)

थानेदार—क्या है सेठजी ?

धनीराम—ये लोग मुझे लिवा लाए है। इन पर दया होनी चाहिए।

थानेदार—सेठजी, आप उस मौक़े पर स्वय थे, जब ये डाकू राजा साहब के रखे-रखाए जगल पर कुल्हाड़ी चला रहे थे। मैंने राष्ट्र-सघ का मेंबर समझकर छोड़ दिया। परंतु राजा साहब को अपनी जायदाद की रक्षा में हथियार उठाने का अधिकार था; वह अपने आदमियों को ले आए। इस पर भी आप लोग डटे रहे, कुल्हाडी चलाते रहे, और खून-खराबी करने के लिये तैयार हो गए। आप लोगों ने वार भी किए, पर राजा साहब बाल-बाल बच गए। मैं निकट ही अपने सिपाहियों को लिए खड़ा था, ठीक समय पर न आ धमका होता, तो आप लाग राजा साहब को मारकर सारे गांव में आग लगा डालते।

धनीराम—मैं तो बलवे में न था।

थानेदार—श्रीगणेश करनेवालों में तो थे। अब क्या चाहते हैं ?

धनीराम—इन लोगों के भाई-बेटे गिरफ्तार हो गए हैं। जमानत ले लीजिए।

थानेदार—अदालत का हुक्म लाइए। वकील खड़ा करिए। कुछ खर्च करिए।

धनीराम—इनके पास इतना रुपया कहाँ रक्खा है ?

थानेदार—आप इनकी कुछ भी सहायता न करेंगे ?

एक ग्रामीण—जब भूखो मरने की नौबत आती है, तब इनका द्वार देखना पडता है। जब लगान वसूली के लिये राजा साहब का डडा आता है, तब इनकी शरण लेनी पड़ती है; जब ब्याह-शादी, मरण-मौत होती है, तब भी इन्ही के सामने हाथ पसारना पड़ता है। हमारे लिये थोड़े ही कोई बक खुला है।

थानेदार—यह सब लेक्चर सुनने का हमारे पास समय नही। जाना है। (गमनोद्यत)

दूसरा ग्रामीण—जो कुछ सेवा होगी, करेंगे।

थानेदार—हमें लालच दिखलाते हो।

धनीराम—इन लोगों ने तो लालच नही दिखलाया—खैर, कोई तो इनकी सुनेगा; और, न सुनेगा, तो कैद काट आवेंगे।

एक ग्रामीण—कुल की डबेगी, और तो कुछ बात नही।

थानेदार—(कुछ सोचकर) सेठजी, आपके कहने से जमानत ले लूंगा। (मुस्किराकर) परतु एक शर्त है।

धनीराम—(मुस्किराकर) कहिए, कहिए।

थानेदार—आपका जो रुपया इन बेचारो पर निकलता हो, उस पर एक साल का ब्याज छोड़ दीजिए।

एक ग्रामीण—हुज़ूर, हम तो हँसी-खुशी इनको ब्याज और त्याज देंगे। कानून कुछ कहे, हम लोग इनसे बाहर नही हो सकते।

धनीराम—असल रकम ही टोटे में पडती चली जा रही है, ब्याज की तो बात ही क्या! अब चलिए, मैं आपको धन्यवाद देता हूँ—आपने इदकी सुन ली।

थानेदार—आपकी बात माननी पडी, और इनकी दरिद्रता ने मेरे जी को झटका दिया। परतु उतावली मत करिए। मैं दो-तीन घटे के भीतर ही हल्की ज़मानत पर छोड़ देने का वचन देता हूँ। ज़रा ज़िम्मेदारी का काम है। चारो ओर चौकन्ना होकर देखना पडता है।

धनीराम—अच्छी बात है। थोड़े-से विलंब में कोई हानि नही।

कांस्टेबिल—(स्वागत) आज थानेदार साहब को क्या हो गया ?

(चारो का एक ओर से प्रस्थान, दूसरी
ओर गुलाबसिंह और चदनलाल का प्रवेश।)

गुलाबसिंह—अभी-अभी यहाँ किसी की आहट मालूम पड़ी थी। जान पड़ता है, थानेदार पेड़ों की गिनती करके चले गए। क्या थाने पर चलोगे ?

चदनलाल—न सरकार! इस समय का वहाँ जाना आपके पद-गौरव के विरुद्ध होगा। मैं जाता हूँ। सब तय है। घर चलकर केवल प्रबध करना है। आज रात बहुत काम है। गाँव के कुछ किसानो को अपनी ओर मिलाना पडेगा।

गुलाबसिह—इस समय प्रजा बिगडी हुई है। मेरा, तुम्हारा और अपने सिपाहियों का ही बयान दिलाया जा सकता है। कचहरी मे मुकद्दमा जाने पर थानेदार भी अपने पक्ष की गवाही देगा। परतु प्रजा मे मे शायद ही कोई अपनी ओर की बात कहे।

चदनलाल— बहुत गवाह मिल जायँगे सरकार!

गुलाबसिह—क्या रुपया देकर? अब और रुपया नही है।

चदनलाल— नही सरकार! मै व्यर्थ व्यय नही करूँगा। मै कुछ लोगो को जानता हूँ, जो राज्य के पक्ष मे रहेगे। उनको राज्य की मुहर लगा हुआ एक-एक परवाना रियासत की लकडी और घास आवश्यकता के अनुसार काटने के विषय मे दे दिया जायगा। और उनसे राज्य की मुहर लगी हुई कबूलियते ले ली जायँगी। यह तरकीब हमारे पक्ष का प्रबल समर्थन करेगी।

गुलाबसिह—इसको तुम देख लेना, और इस झझट के समाप्त होने के बाद वह नई कोठी बनवानी आरभ कर देना। इमारती लकड़ी जगल से बहुत निकल आवेगी। चूने और ईंटो के भट्ठे लगवाने के लिये भी काफी ईधन मिल जायगा।

चदनलाल—धीरे-धीरे देखूँगा सरकार!

तीसरा अंक

स्थान—लखनऊ का एक क़ानून-भवन

समय—दिन

[क़ानून-भवन मे एक दालान (हॉल) के सामने तीन कमरे हॉल में मेज़े और कुर्सियाँ कतार मे। गोपालजी उतरती अवस्था के मनुष्य चश्मा लगाए हुए, खादी की धोती, कुरता, टोपी, पैर मे चप्पल। कन्हैयाजी और मुबारकअली अधेड़ अवस्था के, खादी की टोपी, अचकन और पाजामा पहने, पैर में चप्पल। तीनो कुर्सियों पर बैठे हैं, अलग-अलग मेजे लगाए हुए। बाकी कुर्सियाँ खाली हैं। गोपालजी की मेज़ पर घंटी। गोपालजी की कमर मे दर्द है, और कन्हैयाजी के दाँत मे। मुबारकअली चुस्त।]

कन्हैयाजी—यदि इलाहाबाद के लीडर और बबई के कांग्रेस-सोशलिस्ट पत्र बंद कर दिए जायँ, तो शासन में कुछ सुविधा हो।

गोपालजी— इससे आपकी दाढ का और मेरी कमर का दर्द कम न होगा, और वे दो के बाईस हो जायँगे।

कन्हैयाजी—आप मुझसे बहुत कम सहमत होते हैं। सारा भार मेरे सिर आ पड़ा है। सेक्रेटरी पर मुझे संदेह है, हेड क्लर्क पर मुझे विश्वास नही, किसी की टिप्पणी मुझे नहीं भाती। प्रत्येक मिसिल का एक-एक शब्द मुझे पढ़ना पड़ता है, और सब उलझनों को स्वयं सुलझाना पड़ता है।

गोपालजी—इस पर भी लोग कहते सुने गए है कि आप अपने मातहतों की सम्मति पर ही चलते हैं।

कन्हैयाजी—लोग मूर्ख हैं, नालायक हैं। (एक बड़ी मिसिल उठाकर) इसी मामले को लीजिए। शिकायत है कि हमारे साथ अन्याय हुआ, मैंने सारी मिसिल घोट डाली, छान डाली। विवश होकर इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि मेरे मातहतों ने जो कुछ किया, उचित किया; कोई अन्याय नहीं हुआ।

गोपालजी—सेक्रेटरी ने क्या राय दी थी ?

कन्हैयाजी—अभी जो मैंने कहा।

गोपालजी—आपने ठीक तो किया।

कन्हैयाजी—एक झमेले की मिसिल यह लीजिए, दूसरे की, तीसरे की, चौथे की—

गोपालजी—क्षमा कीजिए। मेरे लिये अपने ही झंझट क्या कम हैं।

मुबारकअली—आप लोग न-मालूम इन मिसिलों को इतनी

बारीकी के साथ कैसे एकटक होकर पढ लेते है। मेरा ध्यान तो उचट-उचटकर बाहर की विलायतो की तरफ़ जाता है। तब सोचने लगता हूँ कि कैसे उन विलायतो की बराबरी का हमारा हिंदोस्तान होगा, और हम कब अंगरेजी पूँजीवाद के मुकाबले मे सफल होगे ?

गोपालजी—अपने विभाग की मिसिलो को बनाते और फ़ैसल करते चले जाइए, और ब्रिटिश सत्ता का विरोध जारी रखिए। दोनो बाते साथ-साथ चलती रहे।

मुबारकअली—(साँस लेकर) कोशिश तो यही है।

कन्हैयाजी—खाक। आग लगाते जाइए, और उस पर पानी छिड़कते जाइए। मुझे यह दलील कभी पसद न आई। मैं तो यहाँ शासन करने के लिये आया हूँ, और केवल शासन करूँगा।

मुबारकअली—कौन रोकता है ? परतु यह तभी तक सभव है, जब तक ब्रिटिश सत्ता ने टाँग नही अड़ाई।

नेपथ्य मे गान—"झडा ऊँचा रहे हमारा।" (केवल चार पक्तियाँ)। गोपालजी, कन्हैयाजी और मुबारकअली अपने-अपने सामने की मिसिले पढते, लौटते-पलटते और थक-थक जाते है। गोपालजी बीच मे दवा पीते है। गायन की समाप्ति पर दयाराम और अन्य सदस्यो का प्रवेश। दयाराम लबी बाहो का सफेद खादी का कुरता, सफेद खादी की धोती, बाएँ हाथ मे खादी का हलके रग का चौखाना झोला, दाहने

हाथ में कान से जरा ऊँचा मोटे बाँस का लठ, जिसके सिरे पर तिरंगा झंडा। सदस्यो मे दो मुसलमान। गोपालजी, कन्हैयाजी और मुबारकअली सदस्यों का अभिवादन करते ह।)

दयाराम—हमने कहा था कि पद-ग्रहण मत करो। इतने कागज़ों को पढ़ते-पढ़ते आप लोग शीघ्र बुड्ढे हो जायँगे; देश आज़ादी के लिये सिसकता ही रह जायगा। अँगरेजी साम्राज्य उसी आर्थिक अन्याय पर डटा हुआ है, और हम झुकते चले जाते है।

गोपालजी—(चश्मा उठाकर) यह बात है, और नही भी है, महाशय! अँगरेजी राजनीति के नेताओ का स्वर ढीला पड गया, हमे चुनाव के समय के अपने वचन स्मरण करने पड़े, और देखा कि पद-ग्रहण करके हम विधान को नष्ट नही, तो निर्बल अवश्य कर डालेंगे, तब आप सबकी सहमति से हमने पद-ग्रहण किया। भूखो को रोटी और दुखियो को सुख पहुँचाने के लिये ही हम सब यहाँ एकत्र हुए है।

मुबारकअली—नहरों, सड़कों और इमारतों के लिये साहब नई-नई योजनाओं के लिये लाखों रुपए माँगते है।

गोपालजी—मंत्रियों को भाषा, शब्द और कहने के ढंग के साँचे बदलने पड़ेंगे। शब्द की पकड़ में आने पर अर्थ काबू में न किया जा सकेगा।

दयाराम—क्या? इस बात को मैं भी समझना चाहता हूं।

गोपालजी—वह एक दूसरा प्रसग था। सरल शासन के लिये श्रम की जरूरत है, रुपयो की नही। तो भी सपत्ति-शालियों के ऊपर टैक्स बढा दिया जायगा, जिससे सब विभागों को कुछ-न-कुछ सुबीता मिल जाय, और दरिद्रो की अधिक सेवा हो सके।

दयाराम—पहले सेना को करोडो रुपया—चक्रवृद्धि ब्याज की तरह—फिर उपचारक विभागों के लिये बचता ही क्या है? उनके लिये सिर खुजलाइए।

गोपालजी—सेना के खर्च पर कोई भी देश सयम नही रख पा रहा है। धीरे-धीरे जल्दी करिए।

दयाराम—यही आत्मप्रवचना तो उदार दल को ससार-भर में ले डबी। आपमें और उनमे अतर क्या रहा?

मुबारकअली—बहुत बड़ा। आदर्शों का अतर और क्रियाओ का अतर। वे लोग विचारों के उदार और काम के कजूस। हम चाहते है पूरी आज़ादी, चाहे ब्रिटिश साम्राज्य के भीतर मिले, चाहे बाहर; उनका आदर्श है ब्रिटिश साम्राज्य के भीतर अधूरी, लूली, लँगड़ी स्वतंत्रता। उन लोगो का तथ्यवाद के साथ गठजोड़ा, और हम लोग आदर्श के लिये कुछ व्यर्थ त्याग भी करने को तैयार रहते है। वे लोग लोकमत के टेढ़े पाजामे में सीधी टाँग ठूँसते हैं, और उसमें घुटना नवाते नहीं, और कहते हैं—लोकमत! लोकमत! लोकमत को कितने मूर्ख मिलकर बनाते हैं? हम लोग लोकमत के साथ बहते हैं। वे

लोग पंद्रह रुपया गज़ का कपड़ा पहनकर और पाँच रुपए का थाल परोसकर देश की दरिद्रता के आँसू रेशमी रूमाल से पोंछते है; हम लोग अपने गरीब भाइयो के साथ मिट्टी के ठीकरो में खाने को और फटे कपड़े पहनकर नगी भूमि पर लेटने को तैयार रहते है। वे लोग हमको चिढाते है, और हम उनकी परवा नहीं करते।

दयाराम--और आप लोग विधान का सचालन करके देश मे ब्रिटिश सत्ता की नीव को उनसे भी अधिक मजबूत बनाते है।

एक मुसलमान सदस्य--असल में बाना उदार दल का झीना होने के कारण पहनते नही बनता, पर ज्यादातर लोगों में उस ख़याल की आदत जरूर है, दिमाग़ो में वह जड़ पकड़े हुए है, और तरह-तरह के रास्तो मे होकर वह अपना काम करता रहता है।

दयाराम--मेरा भी यही कहना है, परतु मैं आपकी पार्टी को पसद नही करता।

दूसरा मुसलमान सदस्य--मै आपकी क्या, किसी की भी पार्टी को पसद नही करता।

(नेपथ्य मे 'वदे मातरम्' गायन।
एक मुसलमान सदस्य बैठा रहता है,
और सब खड़े हो जाते है।)

मुबारकअली--भाई साहब, राष्ट्रीय गीत की इज्जत के लिये

आपको खडा होना चाहिए था। आप तो मुसलमानी तहज़ीब के भी ख़िलाफ़ अमल करते है।

उक्त मुसलमान सदस्य—मैं अपने लीडर से पूछकर इसका जवाब दूंगा। यों ही अपने हक को बरबाद न होने दूंगा।

गोपालजी—कौन-सा हक जनाब ?

मुसलमान सदस्य—नौकरियों का, मुहकमो की ज्यादा चपातियो का, मुक़ामी बोर्डों में अलग जगहो का, वगैरा-वगैरा अगर उस गीत को आप लोग अँगरेजी में गाएँ, तो शायद ज्यादा एतराज न हो।

मुबारकअली—क्या आपको कभी गरीब मुसलमान भाइयों का खयाल आता है, जो ग़रीब हिंदुओ ही की तरह गुलामी की साँकलो में जकड़े हुए है ? इन्ही की तरह वे भी एक-एक दाने को तरसते है ? नौकरियाँ तो बहुत थोडी है, जिनके लिये आपकी भाँति के विचारवाले हिंदू और मुसलमान आपस में लड़े मरते है।

(नेपथ्य मे 'सारे जहाँ मे अच्छा हिंदोस्ताँ हमारा।' गायन होता है। सब लोग खड़े हो जाते है।)

उक्त मुसलमान साहब—इस गीत के लिये क्या करूँ, यह सोचकर बतलाऊँगा। (प्रस्थान।)

(गायन समाप्त होने पर दयाराम खड़ा रह जाता है, और सब बैठ जाते है।)

दयाराम--मैं यह पूछता हूँ कि आप लोग गरीब हिंदू-मुसलमानों के लिये क्या करते है ?

(गोपालजी घंटी बजाते है । सेक्रेटरी का प्रवेश । सेक्रेटरी अँगरेजी पोशाक मे अँगरेज । एक हाथ मे मिसिल और दूसरे मे कलम लिए ।)

सेक्रेटरी--आज्ञा! महाशय ।

गोपालजी--वेतन और भत्तो मे से, ऊल-जलूल और अट-शट मद्दो में से मैंने बहुत-सी रकमे छाँट दी है । उन रकमों को गरीबों की दशा सुधारने के काम मे लाना है । उनके लिये मैं मरमिटूँगा । समझे ?

सेक्रेटरी--महाशय ! किंतु--

गोपालजी--यहाँ किंतु-परंतु की रत्ती-भर भी गुंजायश नही । हमे उन्ही लोगो ने यहाँ भेजा है । हम उनके सेवक है ।

सेक्रेटरी--महाशय, हम लोग पूरा सहयोग देने के लिये मन-वचन से तैयार है । यह हमारी प्रकृति में है । सहयोग के लिये यदि हमें रातों जागना पडे, तो सकोच नही, परंतु--

गोपालजी--यह आप लोगो का गुण है कि आप आसानी से अपने ढाँचे को किसी भी नए साँचे मे ढाल लेते है । हम भी पूरी तौर से आपका साथ देंगे ।

दयाराम--आ गए न इनकी मीठी बातो में ? मिसिलों और कायदों से छान-छानकर जितना पानी ये पिलाएँगे, उतना

ही आप पिएँगे ? सहयोग करके ही तो विधान नष्ट किया जायगा।

मुबारकअली—आप क्यों उसे बार-बार दुहराते है ? हम धीरे-धीरे पूरी आज़ादी हासिल कर रहे हैं ।

दयाराम—जी हाँ, ज़मींदारों को पुचकारनेवाले क़ानून बना-बनाकर किसान-सभाओं को आज़ादी के साथ मरने-पिटने दीजिए । (डडा हिलाता है ।)

कन्हैयाजी—बैठिए, बैठिए । हर जगह मोटे बॉस पर झडा चढाकर शान नही जमाई जा सकती । हम लोग भी उसी मिट्टी के बने है, जिसके आप ।

दयाराम—यदि आपको हमारा यह झंडा पसद नही, तो हम लाल झंडा उड़ावेंगे ।

कन्हैयाजी—हम लोग किसी की धमकी की परवा नही करतें । हमें शासन करना है । शासन दिल्लगी नहीं, और न बकवास, और न यह स्थान प्रचार-कार्य के लिये है ।

दयाराम—हमारे साथियों के बल-भरोसे आप कूदा किए, और यहाँ आए है । वोट के समय देखूँगा ।

मुबारकअली—वोटरों की कुछ मत कहिए । उन्हे जो घुट्टी आप पीने को दे देते है, उसी को हम भी देना जानते है ।

गोपालजी—(दयाराम से) भाईजी आपस में विवाद मत करिए । आप भी एक पद ग्रहण करें, और अपने सिद्धांतो को व्यावहारिक रूप दे ।

दयाराम—हमें यह सब कुछ नहीं करना है। हमें तो इस घर में एक अलग कमरा दे दीजिए। हमारी-आपकी एक जगह न पटेगी। यदि आपके पास जगह न हो, तो हम बाहर ही रहकर अपना काम और आपकी नाप-तौल करते रहेंगे।

गोपालजी—भाईजी, हमारे यहाँ कई कमरे खाली हैं, उनमें से एक ले लीजिए। हम सब जाग्रत् जनता के दामनवाले हैं। आप बाहर कैसे चले जायँगे ? आप विना क्या हमारा यहाँ मन लगेगा ?

सेक्रेटरी—आप सबके बाहर चले जाने पर फिर इस घर को कौन सँभालेगा ?

दयाराम—राजा, नवाब, जमींदार, ताल्लुकेदार। पहले तो आप उन्हीं के पिट्ठू थे ?

सेक्रेटरी—गत न शोचामि। गुजरे को भूल जाइए। हम भी भुला चुके है। ज़मीदार निकम्मे है। उन्होंने सब अच्छे-अच्छे अवसर हाथ से खो दिए। वे कभी इस भवन के अधिकारी न बन सकेंगे; यदि कभी बन भी गए, तो हम उनका भी कूड़ा साफ करेंगे। हमको यहाँ तो रहना ही है।

दयाराम—जरूर।

सेक्रेटरी—मैं न रहूँगा, तो कोई और सही। परंतु हमारे विना किसी का काम नही चल सकता।

(सेक्रेटरी गोपालजी का संकेत पाकर बैठ जाता है।)

दयाराम--मुझे गोपालजी, फिलहाल बाएँ हाथवाला कमरा दे दीजिए।

गोपालजी--आप बीचवाले कमरे में रहते, तो अच्छा होता।

दयाराम--जी नही। वहाँ चकाचौंध ज्यादा है। इसके सिवा बाएँ हाथवाले कमरे से बाहर जाने का रास्ता बहुत सीधा और पास है।

कन्हैयाजी--वह रास्ता आपको जितना पास जान पडता है, उतना साफ नही।

गोपालजी--खैर, वही रहिए, कहीं भी सही। लीजिए, यह उसकी चाभी है।

(दयाराम चाभी लेकर कमरा खोलता है, और उसमे अपना झोला रख देता है। झोले से एक पटिया निकालकर कमरे पर लगा देता है। उस पर लिखा है 'लालबाद') (एक दर-बान समाचार-पत्र लाकर गोपालजी की मेज पर रख जाता है। गोपालजी उसे लौटते-पलटते है।)

कन्हैयाजी--'लीडर' क्या कहता है ?

मुबारकअली--कहता होगा। उसके जरा-जरा से कहने पर आप लोग क्यों ध्यान देते हैं ? अँगरेजों के अखबार हमारी तारीफ करते हैं, और यह सदा हमें फूटी आँखो देखा करता है।

गोपालजी—तो भी कन्हैयाजी, इस महत्त्व-पूर्ण समाचार को पढ़िए।

कन्हैयाजी—(लीडर' मे मे पढते हुए) "आज गोपालजी एक पैर में चप्पल और दूसरे में गुरगाबी जूता पहने हुए देखे गए। बेचारे काम में बहुत व्यस्त रहते है। समय पर खाना नही हो पाता। नीद दुष्प्राप्य हो गई है। कमर में दर्द रहता है। दिन-रात सेक्रेटरियों के साथ माथा-पच्ची करने में जाता है। परसों तीन बजकर सवा दो मिनट पर उल्टा कुरता पहन-कर आए थे। ठीक एक बार, सन् १८६७ में, इंगलैंड के प्रसिद्ध लिबरल-लीडर ग्लैडस्टन भी विचार-भ्रम में पड़कर ऐसा ही कर गए थे। कन्हैयाजी ठीक लिबरलों की तरह ही अपने सब कपड़े पहनते है, परतु मिजाज की गरमी के कारण कभी-कभी निसिले फेक देते है। ....राष्ट्र-सघियों का पहला विचार ग़लत दिशा मे उदय होता है, और दूसरा सही दिशा में। सोचते कुछ है, कहते कुछ है, और करते कुछ और है। राष्ट्र-सघियो में फूट उठ खडी हुई है। लिबरलों को अपनी योग्यता और ठडी बुद्धि के बल-भरोसे उत्तेजित, जाग्रत् जनता की अवहेलना भी करते हुए देश को पक्का, कुटा हुआ मार्ग दिखलाना चाहिए।"

दयाराम—मूर्खता इसे कहते है। ये लोग तो अँगरेज़ लिबरल नेताओ के बनाए हुए नुसखों का पानी पीते हैं। हृदय से उठी हुई प्रबल, सरल, स्वच्छ धारा को दिमाग़ तक पहुँचने ही नहीं

देते—और हैं इतने कि एक हाथ की उँगलियों पर गिन लीजिए। बिलकुल प्रभाव-हीन।

गोपालजी—इस तरह अपने को भ्रम में मत डालिए। इनमें कुछ बड़े त्यागी और साधु भी हैं। कच्ची जनता पर उन थोड़ों-सा का बहुत प्रभाव पड़ सकता है। स्मरण रखिए, विचार कार्य का पिता है।

दयाराम—हमारे विचार शीघ्र आगे चलकर कार्यों के पिता. होंगे। सच्ची और असली क्रांति को हम ('हम' पर ज़ोर देकर) जन्म देंगे।

कन्हैयाजी—इससे जन-सत्ता कायम न होगी, किंतु कुछ प्रबलों की अल्प सत्ता।

दयाराम—जनता को दबाए रखने की यह एक विलायती दलील है।

गोपालजी—उस समाचार-पत्र में दूसरी ओर एक और टिप्पणी पढ़िएगा कन्हैयाजी;

कन्हैयाजी—(समाचार-पत्र मे से पढते हुए) "गैर-जिम्मेदार राष्ट्र संघवाले ज़मीदारों, किसानो, शिल्पस्वामियों और श्रम-जीवियों के बीच में झगडे करवाकर खून-खराबी कराने के लिये बेचैन हैं। ज़मीदारों को चाहिए कि स्वयं किसानों को आवश्यक सुबीते दे दें, किसानों के हक़ों की रक्षा में उनके सहायक हों, और अपना प्रबल संगठन करें।"

गोपालजी—मुझे तो ज़मीदार नाम से लाज आती है।

कन्हैयाजी—और सुनिए— (पत्रों मे से पढ़ते हुए) "नौकरों के वेतन और भत्तों में बहुत कमी कर देने से रिश्वत का बाज़ार गरम होगा।"

दयाराम—रिश्वत लेनेवालो को तो विना प्रमाण लिये ही उल्टा टाँगकर कोड़े लगाना चाहिए। तब इस गरीब देश से यह भयंकर रोग दूर होगा। परतु थोड़ी तनख्वाहवालो का रुपया बढा देना चाहिए।

गोपालजी—मुझे आश्चर्य है कि उतनी ही थोड़ी तनख्वाह पानेवाला एक विशेष विभाग का नौकर विना रिश्वत के अपना काम मज़े मे चला सकता है, और दूसरे विभागवाला नहीं चला पाता। सेक्रेटरी साहब, आज्ञा जारी करिए कि रिश्वत के मामले कदापि न दबाए जायँ, और दोषी को कड़ा दंड दिया जाय—रिश्वती अफसरों को खोज-खोजकर पकड़ा जाय।

सेक्रेटरी—जो आज्ञा।

कन्हैयाजी—उस बेवक़ूफ़ जनता को भी तो कुछ कहिए, जो ज़रा-ज़रा-सी सड़ी घटना में सदा कोई-न-कोई 'भयंकर परिस्थिति' देखती है, और हाथ जोड़कर रिश्वत पिलाती है। रिश्वत के मामले खड़े होने पर रिश्वतखोरों की तरफ़ से गवाही देने तक को तैयार हो जाती है।

दयाराम—ग़रीबी, ग़रीबी इसका कारण है!

कन्हैयाजी—हरगिज़ नही। ग़रीबी और रिश्वत!

(दरबान बहुत-से तार लेकर गोपालजी की मेज़ पर रख जाता है।)

गोपालजी—(एक तार खोलते हुए) इन व्यर्थ के तारों के मारे नाकोदम है। (पढ़कर) देखिए, अब जनता मुझसे यह काम कराना चाहती है। तार में लिखा है—"अस्पताल के कपाउंडर ने दवा मे पानी मिला दिया। दंड दीजिए।" (दूसरा खोलकर) यह और भी बढ़कर है। बनारस का है। लिखा है—"चौखभा-सड़क पर एक-एक फट के गड्ढे है। एक गड्ढे में इक्केवाले के बुड्ढे घोड़े का पैर फँसकर घायल हुआ। सहायता कीजिए।" और सबसे बढ़िया यह है। गोरखपुर का है। सुनिए—"डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मवेशीखाने मे घास नही है। बोर्ड को मसूख करिए।"

(नेपथ्य मे—"हमारी पुकार सुनिए। पढ़े-लिखे होन पर भी बेकार है। रोजगार दीजिए।")

गोपालजी—इस पुकार को सुनते-सुनते कान पक गए है। समझ मे नही आता, कैसे यह समस्या शीघ्र हल हो। कृषि—

सेक्रेटरी—महोदय, कृषि ऐसा व्यवसाय है, जो अधिकांश बेकारों को रोटी दे सकता है।

दयाराम—यदि सामूहिक रूप में हो, तो; नही तो, 'अपनी-अपनी डफली, अपना-अपना राग।"

गोपालजी—यह अपनापन ही तो संपत्ति की संस्था का मूल है, और व्यक्तिगत प्रयत्न का प्रेरक।

दयाराम—यह दलील पुरानी है। मैने अपनी पुस्तक में इसका खंडन किया है; अभी छपी नही।

सेक्रेटरी—महाशय, कृषि और उद्योग-धंधो की उन्नति वर्तमान ढाँचे को सुधारते हुए की जाय, तो . .

दयाराम—(जल्दी से) और शिल्प ? वह तो इँगलैंड की बपौती ठहरी ! (सेक्रेटरी की ओर ताकता है)

गोपालजी—शांत। मेरे सामने सेक्रेटरी का अपमान मत करिए।

दयाराम—ठीक-ठीक। परंतु यह सब है क्या ? कोरी सलाहें और कागज़ी घोड़ो की हीसें ! कीमती और खर्चीले उपाय बतलाकर निःस्पृह और निश्चिंत निरीक्षक की तरह आपके लूले-लँगड़े विद्वान् दूर खड़े हो जाते है, और फिर सोचते है कि उनकी लापरवाही मे फल क्यो नही लगे ? दफ्तरों मे ढेरो मिसिले तैयार करके, लाल फ़ीतों मे बाँध-बाँधकर, सावधानी के साथ, बेशक़ीमत आलमारियों में बंद कर दी जाती है। डेन्मार्क, जर्मनी इत्यादि देशो मे क्या इसी क्रिया का अवलंबन किया जाता है ? जिस तरह ब्रिटिश साम्राज्य सेना की मद पर आँख मीचकर रुपया बहाता है, उसी तरह जब तक आप कृषि और शिल्प को खुले हाथो सहायता न करेंगे, कुछ व्यर्थ व्यय न करेंगे, तब तक जलते तवे पर बूंद डालने से क्या होना है ?

भूखा किसान और टूटा शिल्पी सहायता के लिये आपके सामने आज हाथ पसारता है, तो बरसों बाद आपके सेक्रेटरी के कान पर जूँ रेंगती है। और, फिर इन सब बेकारो को ज़मीन भी तो कहाँ से दीजिएगा ?

गोपालजी—ज़रा धीरे, जरा धीरे बात कहिए। नवाब और राजा लोग हमारे-आपके इस विवाद को सुनकर अपने विरोध को मज़बूत बनाने की चेष्टा करेंगे।

कन्हैयाजी—राजा और नवाब सदा अपने गोल कमरों के सजाने की चिंता में लगे रहेंगे। चिंता मत करिए।

गोपालजी—इस समय की बैठक समाप्त होती है। सेक्रेटरी साहब, कमरे में चलिए। बहुत काम करना है। योजनाओं पर विचार... ..

दयाराम—मुझे भी 'कॉर्ल मार्क्स ऐंड ऑफ्टर' का अध्ययन और पारायण करना है।

(अपने कमरे मे जाता और भीतर से बद कर लेता है। गोपालजी और सेक्रेटरी दाहने कमरे मे जाते हैं, बीच के कमरे मे मुबारकअली। अन्य सदस्य भी जाते हैं। केवल कन्हैयाजी अपने स्थान पर।]

कन्हैयाजी—भीड़-भाड़, हो—हल्ला मुझे बरदाश्त नहीं, परंतु लोग हुल्लड़ की सनक से शासन को सानना चाहते हैं। यह न होने दूंगा। अब यह ढेर देखूँ। (मिसिले उठाता है।)

(दरबान का प्रवेश।)

दरबान—सरकार, एक साहब बाहर खड़े है। यह चिट्ठी दी है।

कन्हैयाजी—(चिट्ठी पढकर) सिफ़ारिश, सिफ़ारिश! (चिट्ठी फाडकर फेक देता है।) कह देना, चिट्ठी यमलोक गई, और वह भी तुरत वही सिधारे।

[दरबान बाहर जाता और तुरत फिर आता है।]

दरबान—हुज़ूर।

कन्हैयाजी—मुझे हुज़ूर मत कह भाई, और पीछा छोड़। कह, क्या कहता है?

दरबान—सरकार, वह कहता है, हम अवश्य दर्शन करेगे। कहता है, बहुत जरूरी काम है, हम राष्ट्र-सघ के है।

कन्हैयाजी—हूँ—(इधर-उधर छड़ी के लिये आँख दौड़ाता है। न मिलने पर माथे पर हाथ फेरते हुए) अच्छा भाई, भेज दे उसे यहाँ।

[झोला हाथ मे लिए हुए सगुनचद का प्रवेश]

सगुनचंद—वंदे मातरम्।

[कन्हैयाजी धीरे से वदेमातरम् कहकर
केवल सिर हिलाकर अभिवादन करता है।]

कन्हैयाजी—बैठ जाइए, और संक्षेप में अपनी बात कह डालिए।

सगुनचद—(मुस्किराकर) किसानों और मजदूरों के साथ अत्याचार हो रहे हैं। आप लोग अकेले यहाँ बैठे-बैठे निवारण

करना भी चाहे, तो कुछ नहीं कर सकते। मैं राष्ट्र-संघ का पुराना सेवक हूँ। त्याग किए है। चिट्ठी भी लाया हूँ। मुझे उस क्षेत्र में नियुक्त करके देखिए कि समस्या को किस आसानी से हल करता हूँ। परिस्थिति भयकर हो उठी है वहाँ।

कन्हैयाजी—और कुछ कहना है ?

सगुनचद—(गभीर होकर) देखिये, बलवे हो जायँगे। लोग हिंसावादी होते चले जा रहे हैं। उनकी समझ में अहिंसामूलक साम्यवाद नही आ रहा है। आपकी नाहक़ बदनामी होगी। मैं स्थिति को सँभाल सकता हूँ।

कन्हैयाजी—हम लोग सब मामलों की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करते और अपने निष्कर्षों को ठोस कार्य का रूप देते हैं। हिंसा का दमन करने के लिये हमने कमर कस ली है। हमारे पास काफ़ी साधन हैं। हमें आपकी आवश्यकता नही।

सगुनचद—[उसी प्रकार] देखिये, सेक्रेटरियो की आँखों से प्रश्नों को मत देखा करिये। आप और हम एक ही दल के है, एक ही आदर्श के पुजारी। जब जगह-जगह मजदूरो और किसानों के अलग-अलग संघ क़ायम हो जायँगे, हड़तालें होंगी, तब आपके सेक्रेटरी कुछ न कर सकेंगे, हम लोग ही काम आवेंगे।

कन्हैयाजी—यानी मैं अंधा हूं, और चाहे जहाँ घसीटा जा सकता हूँ, और चाहे जिस तरह की धमकी में आ सकता हूँ।

सगुनचंद—[जरा तेज होकर] मेरे पीछे जनता है, जनता

जब चुनाव का समय आवेगा, तब ओट जुटाने में हमी लोग काम आवेंगे। आप लोगों को अधिकार-पद हम लोगों की सहायता के लिये ही दिया गया है। हम नही चाहते कि आपकी शिकायत हमें राष्ट्र-सघ में करनी पड़े, जो आप सबके ऊपर है।

कन्हैयाजी—निकलो, निकलो यहाँ से।

सगुनचद—यह साहस !

कन्हैयाजी—हाँ जी, और कुछ उससे भी अधिक।

(कन्हैयाजी कई मिसिलें एक हाथ मे उठा लेते है, दूसरे हाथ मे सगुनचद को धक्का देते हैं। वह चिल्लाता है। शोर सुनकर गोपालजी अपना कमरा खोलकर निकल आते है।)

सगुनचंद—मार डाला, दुहाई है !

कन्हैयाजी—अभी तो वरदान दिया है, थोडा प्रसाद और लीजिए।

गोपालजी—ठहरिए, ठहरिए।

सगुनचद—अपने मित्र से हमें बचाइए।

गोपालजी—भाई, भूल जाओ। क्षमा करो।

सगुनचंद—देखूँगा, विराट् जनता इस तरह की घटनाओं पर क्या सम्मति देती है ! (जाता है।)

गोपालजी—मैं बहुत परेशान हूँ। इस्तीफ़ा देते नही बनता, क्योंकि सार्वजनिक चुनाव के भयंकर रूप का मुकाबला करना पड़ेगा, और आप संयम से काम लेते नही।

कन्हैयाजी—मै कम हैरान नही हूँ। बीचवाली कोठरी में अकेले बैठकर अपनी समस्याओं पर मनन करूंगा। मेरे पास कोई न आवे।

(बीचवाली कोठरी मे प्रस्थान।
कोठरी के किवाड जोर से बंद करता है।)

गोपालजी—(स्वगत) एक दिन के लिये महानायक के पास जाकर पूछूँ कि क्या करे, क्या न करे।

(दरबान आकर दो तार गोपालजी
की मेज पर रख जाता है।)

गोपालजी—(दोनो तार पढकर) विलक्षण ! कैसी-कैसी विचित्र घटनाएँ नित्य सामने आती है।

(घटी बजाते है। सेक्रेटरी आता है।)

सेक्रेटरी—महाशय !

गोपालजी—ये दोनो तार तीन दिन के विलब से मेरे पास आए हैं। विलंब का कारण पीछे खोजना, इस समय केवल इतना करना है—ज़िला-मैजिस्ट्रेट को लिखो कि तुरत जॉच करे, और इन लोगों को समझा-बुझा दे। दोनो तार एक दूसरे के विरुद्ध है। एक कहता है, किसानो ने ज़मींदारों को लूट लिया; दूसरा कहता है, ज़मीदारों ने किसानों को मार डाला। (सेक्रेटरी के हाथ मे तार देते है। वह पढ़ता है।)

सेक्रेटरी—किसानों के लिये शीघ्र ही कुछ महत्त्व-पूर्ण कार्य करने की ज़रूरत है। और ज़मींदारो के लिये भी।

गोपालजी—हो रहा हूं, धीरे-धीरे सब कर रहा हूँ। आप बाएं कमरेवाले महाशयो का सदा ध्यान रखिए। है भी ठीक। दीन-दरिद्रो के दु:खों का दर्द सबसे अधिक उन्ही में दिखलाई पड़ता है। (सेक्रेटरी का तार लेकर प्रस्थान)

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—सरकार, एक श्रीमतीजी मिलना चाहती हैं।

गोपालजी—श्रीमतीजी ! कौन ? अच्छा, भेज दो।

(दरबान जाता है, और हीरा आती है। गोपालजी अभिवादन करते हैं।)

हीरा—श्रीमान्, मैं बडेगांव मे रहती हूँ। एक निवेदन करने आई हूं।

गोपालजी—कहिए, कहिए। सकोच मत करिए।

हीरा—हमारे गॉव के कुछ लोगों को एक नेता सगुनचंद ने बहुत भड़काया, बहकाया। उन लोगों ने बलवा कर दिया।

गोपालजी—पुलिस तहकीकात करेगी। मामला चलने पर अदालत उचित फ़ैसला देगी।

हीरा—पुलिस की तहकीकात तो ठीक हुई है, इसलिये अदालत भी ठीक ही फ़ैसला देगी, पर गॉववाले हम स्त्रियों का अपमान करते है।

(पहली बात सुनकर गोपालजी मुस्किराते और अंतिम बात सुनकर भौहें सिकोडते है।)

गोपालजी—स्त्रियों का अपमान !

हीरा—हाँ, श्रीमान् ! मैं उनकी सभा में बोलना चाहती थी, तो बोलने ही नहीं दिया । कहते थे, तनख्वा बढ़वाओ या हड़ताल करो । जब मैंने नही माना, तब मुझे मार-पीट की धमकी दी, और बहिष्कार करने पर उतारू हो गए ।

गोपालजी—मैं बड़ेगाँव की शाखा-सभा को लिखूँगा । आप घबराएँ नहीं । (हीरा का प्रस्थान ।)

(लाठी, झोला और झडा लिए हुए
दयाराम का प्रवेश ।)

दयाराम—श्रमजीवियों की मजदूरी के घटे कम करने के लिये आपने अभी तक कुछ नही किया । पूंजीपतियों के मुनाफ़े को मजदूरों मे बाँटने की योजना अभी तक काम में नही लाई गई । सब जमीदारियों को छीनकर अभी तक अपने किसानों में विभक्त नहीं किया ।

गोपालजी—बलवे होने पर क्या करूँ ?

दयाराम—जो मन में आवे । वर्तमान जीवन से तो मौत अच्छी । शासन उसी तरह अशिष्ट बना हुआ है । लोग उसी तरह भूखों मर रहे हैं । ब्रिटिश साम्राज्य उसी तरह मजबूती के साथ टिका हुआ है, और आप शांति क़ायम रखने की चिंता में हैं ।

गोपालजी—हथेली पर तो सरसों जमते नही, सब-के-सब सुधार ससार में एक साथ कोई भी नही कर सकता । हम

लोग यहाँ राष्ट्र-सघ की शक्ति के चिह्न-मात्र हैं, और वर्तमान विधान के शिकार।

दयाराम—(मुस्किराकर) यह तो मैं भी जानता हूँ, परतु

गोपालजी—देखिए, शांति न रही, तो विधान को ब्रिटिश-साम्राज्य अपने हाथ में कर लेगा। विधान को तो सुदर ढंग से चलाना ही पडेगा। साथ ही हम लोग ब्रिटिश-साम्राज्य की जड खोदने की फिक्र मे भी लगे रहेंगे।

दयाराम—(अतिम बात का अनसुनी करके) अच्छी बात है, चलाइए विधान को। यदि आप हमारी यहाँ न सुनेगे, तो हम किसानों और मजदूरों के सामने अपनी बात जोर के साथ पेश करेंगे।

गोपालजी—आप विराजिए, आज अपने चारो तरफ़ जो कुछ है, और जो कुछ हो रहा है, उसे स्पष्ट तौर पर देखिए। उसे अनुगत करके फिर आदर्शवाद को कार्य-रूप दीजिए। संपर्कों और संघर्षों की वास्तविकता नहीं भुलाई जा सकती।

दयाराम—मैंने इस पुरातनवाद का अपनी पुस्तक में खडन किया है। ग़रीबों की आहों ने उन सिद्धांतों को जन्म दिया है, हमारी ग़लत परपरा और मन का आलस्य ही हम लोगों को शीघ्रता और दृढ़ता के साथ काम नही करने देता।

(दरबान का प्रवेश। एक कार्ड मेज पर रखता है।)

गोपालजी—(कार्ड पढकर) बड़ागाँव के राव गुलाबसिंह । भेज दो ।

(दरबान का प्रस्थान । राव गुलाबसिंह का दरबारी पोशाक में प्रवेश ।)

गोपालजी—(पारस्परिक अभिवादन के उपरांत) आप ही के गाँव से बलबों का प्रारभ हुआ । खेद है !

गुलाबसिंह—उसमे मेरा कोई दोष नही । हमारे ही ऊपर वज्रपात हो, और हमी दोषी ठहराए जायँ !

गोपालजी—आप बडे हैं, प्रबल हैं । जनता सबल बन रही है । आपको झुकना पडेगा । त्याग करिए । किसानों को अपनाइए ।

गुलाबसिंह—हमारे पुरखों ने हजारों बरस से देश के लिये खून की नदियाँ बहाई है । त्याग और कैसा होता है ?

गोपालजी—अब आप खून मत बहाइए । केवल थोड़ा-सा पसीना खर्च करिए ।

दयाराम—खून बहाया था देश के लिये इनके पुरखों ने ! और किसान तो उन दिनो मखमली गद्दो पर लोट लगाते रहे होंगे !

गुलाबसिंह—आप···· आपका शुभ नाम ?

दयाराम—साम्यवादी । और पूछिए ?

गोपालजी—क्षमा कीजिए दोनो साहब । सवाल मुझसे है । जिम्मेदारी मेरी है ।

दयाराम—आप इन लोगो से डरते क्यो है ; ये निकम्मे और निर्बल है। प्रबल जनता हमारे साथ है। आप इनकी खुशामद क्यों करते है ?

गोपालजी—आप इस समय विवाद मत करिए।

(गुलाबसिह को ओर मुँह फेर लेते है। दयाराम कुपित होकर तेज़ी के साथ अपने कमरे मे चला जाता है।)

गुलाबसिह—इसी तरह के लोग मेरी रियासत मे उत्पात मचाए हुए है। जमीदारो को नष्ट करने के लिये बावले हो रहे है। खाई रोटी नही पचने देते, श्रीमान् !

गोपालजी—धीरे-धीरे रावसाहब ! मै जमीदारो का नाश करने के पक्ष में नही। सपत्ति की सस्था का नाश हमारा ध्येय नही। शहरों की सपत्ति-संस्था को तो हम छू तक नहीं रहे है, परतु वर्तमान ज़मीदारी-प्रथा को उठा देने के पक्ष में अवश्य है। अपने दीन-दुखी किसानो की रोटी के एक-एक टुकडे के लिये तरसते हुए देखकर आप लोग क्यों नही पसीजते ? क्या निर्बल-दुर्बल जनता के बाहु-बल पर राष्ट्र बन सकता है ? टिक सकता है ? थोड़े-से ज़मीदार तो राष्ट्र को बनाते नही।

गुलाबसिह—तो क्या अल्प संख्यावालों को कुचल दिया जायगा ?

गोपालजी—नही। जन-सत्ता स्थापित होगी। उनमें अल्प

मतवाले भी चैन से रह सकेंगे। पचायतं वाद-विवाद की मनोवृत्ति भारत मे पहले भी थी, और टिकाऊ रूप से अब फिर यहाँ निवास करेगी।

गुलाबसिंह—आप देखिए श्रीमान्, हम लोग अल्प-सख्या में होते हुए भी बहुसख्यक जनता के लिये कितने बडे-बडे काम करते रहे हैं। चित्रकारों, गायकों, कवियो का पालन-पोषण करते रहे हैं। बडे-बडे भवन बनवाते रहे है। ललित कलाओं को हमने जीवित रक्खा है। अब भी सब प्रकार के चदे देते रहते और रियाया पर रक्षा का हाथ फेरते रहते है।

गोपालजी—(जरा तमककर) वही रियाया, रियासत और राज्य ! इन स्वप्नो को छोड़िए रावसाहब ! सबके सम होने का समय आ गया है। सबको शांति, व्यवस्था और सामाजिक न्याय एक-से रूप में मिलने का युग आ गया है।

गुलाबसिंह—तो क्या यह युग बलवों और रक्तपात को साथ लाया है ? अँगरेजी राज्य स्थापित होने के समय हमारे पूर्वजो को जो सनदी अधिकार मिले थे, उन्हे तो आपको जारी रखना चाहिए। आपने क़ानूनों को न तोड़ने का प्रण किया है।

गोपालजी—(एक कागज पर कुछ लिखकर) मैंने इस बात को नोट कर लिया है। आपके कानूनी हक़ों की रक्षा की जायगी, परंतु आप भी कोई दुर्व्यवहार मत कीजिए।

गुलाबसिंह—सभाओं में लोग बहुत गाली-गलौज बकते हैं। समाचार-पत्रों में गंदे आक्रमण करते हैं, और. ...

गोपालजी—स्कूलो में पढाने के लिये अच्छी, नई पुस्तकें बनवाई जा रही हैं; उन पुस्तकों में इन बातो का घोर निषेध रहेगा।

गुलाबसिह—(उठते हुए) तब मै यह आशा करूँ कि हम लोगों पर अत्याचार न होगा, हमारे हक़ों की रक्षा की जायगी ?

गोपालजी—निस्संदेह। अर्थात् जब तक नए क़ानून बनते हैं, पुराने क़ानूनो की रक्षा करनी ही पड़ेगी।

गुलाबसिह—यदि हम लोगों की रक्षा की जाय, तो हम ज़मींदार-सभा कायम न करेंगे।

गोपालजी—यह आपकी मर्ज़ी। परतु विश्वास रखिए, इसकी हमें रत्ती-भर भी परवा नही। (गुलाबसिह का प्रस्थान।)

(दयाराम का विना झडे और झडे के प्रवेश।)

गोपालजी—आपने जो पुस्तक लिखी है, उसकी भूमिका मैं लिखूँगा।

दयाराम—मैं किसी भूमिका के लिखाने के फेर में नही हूँ। कुछ प्रश्न करने है, और एक पस्ताव रखना है। जल्दी में हूँ।

गोपालजी—समिति का अधिवेशन करना पडेगा। करता हूँ।

(गोपालजी घटी बजाते है। दरबान का प्रवेश।)

दयाराम—सदस्यों को बुलाओ। अधिकारियों को भी।

(दरबान का प्रस्थान।)

गोपालजी—भाई दयारामजी, विराजिए। खड़े-खड़े कैसे काम चलेगा ?

दयाराम—हमने न बैठने की कसम खाई है। न चैन लेंगे, न चैन देंगे।

(अधिकारियो - सहित समिति के कुछ सदस्यो का प्रवेश। सब आसन ग्रहण करते हैं। दयाराम खडा रहता है।)

एक सदस्य—दम तक नही ले पाते। अभी-अभी थोडे समय के लिये विश्राम मिला था, अब ऐसा क्या हुआ कि तुरत ही फिर बुला लिए गए ?

कन्हैयाजी—आप सोचते है कि यहाँ आपके साथ बात-चीत और वाद-विवाद करने में कलियाँ चिटकती है, और फूल खिलते है। विवश होकर ही बुलाना पड़ता है।

(निवेदन की दृष्टि से गोपालजी कन्हैयाजी की ओर निहोरा-सा करते है, और कन्हैयाजी विद्रोह और चिनौती की दृष्टि से उत्तर देते हैं।)

गोपालजी—दीन-दुखी जनता के कष्ट-निवारण के नाते हमको, आपको, सबको यह क्लेश भुगतना ही पड़ेगा। एक नगर से मिल-मजदूरों द्वारा हड़ताल पर हड़ताल करने की खबरें आ रही हैं। समझौते हो जाते हैं, और मिटा दिए जाते हैं। उपद्रव की प्रवृत्ति घर करना चाहती है। क़ानून का लतियाया जाना कहाँ तक सहा जाय ?

कन्हैयाजी—किसानो और मजदूरो के लिये यथासभव सब कुछ किया जा रहा है, परतु . . .

एक सदस्य—परतु कुछ लोगों को नेतागीरी की हविश सब किया—कराया चौपट कर देती है ।

दूसरा सदस्य—अखिल भारतीय सघ-विधान के बारे में आप क्या कहते है ?

गोपालजी—हम लोग उसके बिलकुल विरुद्ध है। उस विधान की हम यहाँ हवा तक न लगने देगे । वह राष्ट्रीयता का घातक है । परतु उस विधान के अधिकार-वृत्त में हम अन-चाहो की भर्ती न होने देगे । किस समय किस चाल से काम लेना पड़ेगा, इसे समय ही बतावेगा, परंतु विरोध करने के उपायो में से एक सत्याग्रह भी हो सकता है । स्मरण रखिए ।

दयाराम—ऐसा प्रचड तूफान खडा होगा कि बड़े-बड़े राज्य उखड़ जायँगे ।

गोपालजी—आप सदा आपे से बाहर हो जाते है । अभी जो आँधी खड़ी हुई है, इसी को धीरे-धीरे हज़म करने में कुछ समय लगेगा । प्रचंड तूफ़ानों को जन्म देने से ज़रा दूर रहिए ।

दयाराम—क्यों ? यदि हम लाल झडा खड़ा करेंगे, तो क्या आप दमनकारी क़ानूनों द्वारा शासन करेंगे ?

कन्हैयाजी—जी । जिन देशों मे पूर्ण स्वराज्य है, क्या उनमें समाज के बाग़ियों को यो ही डड पेलने दिए जाते हैं ?

दयाराम—(दाँत पीसकर) मैं समझ गया। खूब समझ गया। अब हमें जनता से स्पष्ट कहना पड़ेगा कि आपमें और पुरानी नौकरशाही मे कोई अंतर नही। आप पूँजीपतियों के दामनगीर है, और जनता के शत्रु।

कन्हैयाजी—ऐसी बात और इस तरह की कड़ी आलोचना करने की वृत्ति को हम चुटकी से मसल देंगे। इस प्रकार के विरोध को कुचले बिना देश को आज़ादी नही मिल सकती।

एक सदस्य—अहऽआ!

मुबारकअली—यह कौन था? किसने हिम्मत की?

दयाराम—अपने जासूसों से बाद में खोज करवा लीजिएगा। मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए—भगवाननगर में आपने पुलिस को मज़दूरों पर गोली क्यों चलाने दी?

गोपालजी—जिसमें मज़दूर शांति-प्रिय जनता को और एक दूसरे को नष्ट न कर सकें।

दयाराम—किसानों का जमघट आपसे मिलना चाहता था, आपने पुलिस द्वारा उनकी पहुँच के मार्ग बंद कर दिए। आप उनसे क्यों नही मिले?

गोपालजी—क्योंकि एक लाख आदमियों से बातचीत करने के लिये हमारे पास एक लाख जीभ नही।

दयाराम—अच्छा! खैर, अब मेरा प्रस्ताव सुनिए। कोई भी दस मज़दूर अपना एक व्यापार-संघ बना सकें, और ऐसे

व्यापार-संघ की बात का मानना मिल-स्वामी या पूंजीपति के लिये अनिवार्य हो, लाज़िमी हो।

कन्हैयाजी—इससे मजदूरों में फूट फैलेगी, मिल-स्वामी चट्टे-बट्टे लडाने में समर्थ और सफल होंगे। मैं विरोध करता हूँ।

दयाराम—(गरजकर) आपको मानना पड़ेगा। यही तो जगह है, जहाँ पूंजीपतियों की कमर पर हमारा भरपूर वार बैठ सकता है।

कन्हैयाजी—(तेज़ होकर) We will not permit political vandalısm to masquarade as Trade-Unionism

दयाराम—ज़रा हिंदी फरमाइए, जिसमें सारा देश सुन ले।

कन्हैयाजी—हिंदी मे सुन लीजिए। हम लोग जमी-जमाई राजनीतिक सस्थाओ के सत्यानास करने के दुस्साहस को मज़-दूर-सघ का जामा न पहनने देंगे। बस।

एक मुसलमान—मेरी समझ में नही आया।

कन्हैयाजी—मज़दूर-मघ की टट्टी की ओट से देश को खाक न होने देंगे।

दयाराम—अर्थात् चारो ओर से आप दमन करेंगे।

कन्हैयाजी—यह तो मैंने नही कहा।

गोपालजी—भाईजी, रुष्ट मत होइए। ज़रा स्थिति पर

ध्यान दीजिए। ग्रामों में अभी सुधार की कितनी गुंजाइश है। हिंदुस्थान के शिल्प को अभी कितना पनपना है! इनको ग्राम-सुधार, मजदूर-सुधार इत्यादि साधनों द्वारा पूरी तौर पर अपने हाथ में कर लेना चाहिए। मैं क्रांति का पक्षपाती हूँ। परंतु क्रांति के लिये पहले साधन तो इकट्ठे होने दीजिए, नही तो फ्रांस की तरह एक महीने में तीन सरकारों के बदलने की नौबत आया करेगी।

एक मुसलमान सदस्य—ग्राम-सुधार के मुहकमे में फायदे का कितना हिस्सा मुसलमानों के लिये अलग रक्खा गया है?

मुबारकअली—बंगाल में जितना हिंदुओं को प्राप्य है, उससे कही ज्यादा। मुझे बड़ा अचरज है कि आप नाहक़ हर जगह हिस्सा-बाँट की बात अड़ा देते है, और बलिदान के समय बहुत कम दिखाई पड़ते है।

दयाराम—खैरियत है कि हमारे संप्रदाय के हिंदू-मुसल-मान सकरी आँख से सवालों को नही परखा करते।

(दरबान आकर गोपालजी की मेज
पर तारों का एक ढेर रख देता है।)

दरबान—हुजूर···('हुजूर' शब्द को कहते ही जीभ दबाकर) सरकार, कुछ किसान मिलने के लिये बाहर बेचैन हो रहे हैं।

गोपालजी—इन तारों को देख लूँ, तब बुला लूँ, अथवा जब शरीर को जरा-सा आराम देने के लिये खाली बैठूँगा, तब उनसे बात करूँगा। (दरबान का प्रस्थान। जल्दी-जल्दी तार पढ़-)

कर) ये सब तार एक ही परिस्थिति पर केंद्रित हैं—मज़दूरों के उपद्रव और ज़मींदारों-किसानों के झगड़े ।

कन्हैयाजी—मज़दूरों ने क्या फिर कोई फ़साद किया ? अब इसे कदापि बढने न देना चाहिए ।

दयाराम—हमारी सबकी सलाह से क्यो नही आप इन परिस्थितियो में हाथ लगाया करते ?

गोपालजी—सब अच्छे कामों में आपकी सम्मति विना मैं एक पग भी नहीं रखता, परंतु बुरे कामों में आपकी सलाह लेकर क्यो आपको पाप-भागी बनाऊँ ?

(सब हँसते हैं)

गोपालजी—हिंदुस्थान के शिल्प के हरियाते हुए पौधे को, जिसमे अभी कोपले ही आ रही है, मज़दूरो के कुछ भ्रांत लोग झुलसा देना चाहते है । यही हाल कुछ किसान-नेताओं का भी है । उनका नियत्रण, जरूरत पड़ी तो, कठोरता के साथ करना पड़ेगा । किसानों को कुछ लोग ग़लत पगडडियों पर ले जाना चाहते हैं । राष्ट्र-सघ को इनका सयम करना पड़ेगा ।

कन्हैयाजी—या तो हमे इन लोगो का नियत्रण करना पड़ेगा, या अपना अधिकार-पद त्यागना होगा ।

गोपालजी—हमारे पद-त्याग करने से जितनी हानि किसान-मज़दूरों की होगी, उतनी दमन से न होगी ।

दयाराम—और ब्रिटिश साम्राज्य की ?

गोपालजी—स्वय सोच लीजिए ।

दयाराम—जी। और ज़मींदारों की ?

गोपालजी—(हँसकर) इस सवाल की सूचना पहले से नहीं दी गई, तो भी इसका उत्तर आपको समय धीरे-धीरे देगा।

★